विचार
↓
चिंतन
↓
शोध सृजन

ISSN : 2455-4219

आलोचन दृष्टि

Aalochan Drishti

An International Peer Reviewed Refereed Research Journal of Humanities

वर्ष-5 अंक-19 जुलाई-सितम्बर, 2020

प्रधान-संपादक
डॉ० सुनील कुमार मानस

संपादक
डॉ० योगेश कुमार तिवारी

प्रबंध-संपादक
श्री सुधीर कुमार तिवारी

ISSN : 2455-4219

आलोचन दृष्टि

Aalochan Drishti

An International Peer Reviewed Refereed Research Journal of Humanities

वर्ष-5	अंक-19	जुलाई-सितम्बर, 2020
Year - 05	**Volome - 19**	**July-Septembar, 2020**

प्रधान-संपादक

डॉ० सुनील कुमार मानस

संपादक

डॉ० योगेश कुमार तिवारी

प्रबंध-संपादक

श्री सुधीर कुमार तिवारी

© **प्रकाशक :**

संपादकीय/प्रकाशकीय पता :–

आलोचन दृष्टि प्रकाशन,

आजाद नगर, बिन्दकी, जनपद–फतेहपुर,

उ0प्र0–212635

ई–मेल : aalochan.p@gmail.com

दूरभाष : 09580560498/09451949951

मुद्रण :– जय ग्राफिक्स एण्ड कान्सट्रक्सन,
आई0टी0आई0 रोड़, फतेहपुर–212601।

सदस्यता शुल्क	एक अंक	वार्षिक	आजीवन
व्यक्तिगत	300	1200	10,000
संस्थागत	400	1500	15,000

संरक्षक एवं सलाहकार मंडल

- ❖ **प्रो0 गिरीश्वर मिश्र,** शिक्षाविद् एवं पूर्व कुलपति, म. गां. अं. हिं. वि., वर्धा, (महाराष्ट्र)।
- ❖ **प्रो0 रामसजन पाण्डेय,** कुलपति, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)।
- ❖ **प्रो0 चितरंजन मिश्र,** पं.दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ0प्र0)।
- ❖ **प्रो0 नंदकिशोर आचार्य,** सुथारों की बड़ी गुवाड़, बीकानेर, राजस्थान–252028।
- ❖ **प्रो0 सदानंद गुप्त,** निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, (उ0प्र0)।
- ❖ **प्रो0 कृपाशंकर चौबे,** महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, (महाराष्ट्र)।
- ❖ **प्रो0 माधवेन्द्र पाण्डेय,** हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालयए शिलांग, मेघालय।
- ❖ **प्रो0 प्रेमशंकर त्रिपाठी,** आशीर्वाद अपार्टमेन्ट, सी ए 5/10, देशबन्धु नगर, कलकत्ता–100059।
- ❖ **प्रो0 दिलीप सिंह,** इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र.)।
- ❖ **प्रो0 आर0 एस0 सर्राजू,** हैदराबाद विश्वविद्यालय, (तेलंगाना)।
- ❖ **प्रो0 उमापति दीक्षित,** केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा (उ0प्र0)।
- ❖ **प्रो0 एस0 वी0 एस0 एस0 नारायण राजू,** तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय, तमिलनाडु।
- ❖ **Shri- Tejendra Sharma,** Harrow & Weealdstone, Middlesex HA3 7AN (U.K.)
- ❖ **Shrimati- Susham Vedi,** New Yark, (U.S.A.)

संपादक-मंडल

- ➢ **डॉ0 उदयन मिश्र,** हरिश्चन्द्र पी. जी. कॉलेज, वाराणसी, (उ0प्र0)।
- ➢ **डॉ0 बलराम शुक्ल,** संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
- ➢ **डॉ0 दण्डिभोट्ला नागेश्वर राव,** सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, श्री चंदशेखरेंद्र सरस्वती विश्वविद्यालय, एनात्तूर–कांचीपुरम्, तमिलनाडु।
- ➢ **डॉ0 शशिभूषण भट्ट,** संस्कृत विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, (उ0प्र0)।
- ➢ **डॉ0 अमित द्विवेदी,** इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, (उ0प्र0)।
- ➢ **श्री राम कुमार मानिक,** शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, (उ0प्र0)।

विधि-परामर्शदाता

श्री **उमाशंकर त्रिपाठी** (एडवोकेट), सिविल कोर्ट, फतेहपुर उ0प्र0–212601।

नोट : सभी पद अवैतनिक एवं अव्यावसायिक हैं। प्रकाशित शोध–लेखों एवं उसमें दिये गये उद्धरणों के वाद–विवाद संबंधी किसी भी कार्यवाही का शोधकर्ता (लेखक) स्वयं जिम्मेदार होगा। इस तरह के किसी भी विवाद में संपादक, प्रकाशक एवं 'आलोचन दृष्टि' परिवार के किसी भी सदस्य की कोई जिम्मेंदारी नहीं होगी और किसी भी प्रकार के विवाद का समाधान फतेहपुर न्यायालय में होगा।

संपादकीय

हमारे दैनिक जीवन की कार्यप्रणाली पिछले छः महीनों में काफी बदली है और सोचने–समझने के तरीके भी, साथ ही कार्यप्रणाली की स्थिति और अवस्थिति भी। इन तरीकों में एक ऑनलाइन की नवीन पद्धति भी विकसित हुई है, जो 'संगोष्ठी और सम्मेलनों' से निकलकर अब क्लास, मीटिंग और विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिता आदि में भी अपना वर्चस्व स्थापित कर रही है। इसके तमाम विरोध एवं अंतर्विरोध भी हैं, फिर भी अलग–अलग रूपों एवं माध्यमों से अब स्वीकार ही किया जा रहा है। वर्तमान समय 'कोरोना से मुक्त होने के प्रयास में' तथा ऑनलाइन गतिविधियों में सम्मिलित करता/कराता', आगे बढ़ रहा है; जिसको लेकर तमाम मत–मतान्तर भी लोगों में बन–बिगड़ रहे हैं, जिसका आने वाला वक्त ही, पूर्ण रूप से उचित–अनुचित की मीमांसा कर सकेगा– ऐसा कहना या मानना ही अभी समीचीन है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इस कोरोना काल से हम बहुत कुछ नया सीखे और समझे हैं। देश–विदेश को भी जाने और समझे हैं। भारत में बन–बिगड़ रहे तमाम राजनीतिक समीकरण भी देखे हैं, मध्य–प्रदेश, राजस्थान आदि राज्यों में विशेष रूप से। साथ ही सीमाई–क्षेत्रों की नीति–अनीति भी देखी–समझी है। भूखे मरते–खपते मजदूर भी देखे हैं और किसान भी। दर–दर की ठोकरें खाने वाले लोग भी देखे हैं और ठोकरे मारने वाले इंसान भी। बनती–बिगड़ती अर्थव्यवस्था देखी और उस अर्थव्यवस्था में घिसता–पिसता आम आदमी भी देखा है और साथ ही सब अच्छा हो जायेगा– की संभावना भी देखी है तथा उस संभावना का परिणाम भी देख रहे हैं। अच्छा है कि हम देखना सीख गए हैं, पर यह देखना इतना अधिक हो गया है कि अब सब भूलता जा रहा है। शायद, भूल जाना अच्छा भी है क्योंकि सब कुछ यादकर पाना संभव नहीं हो सकता, अतः भूल जाना ही अच्छा है। इसलिए हम ईश्वर से प्रार्थना भी करते हैं, जो हो, अच्छा हो या जो आपने किया अच्छा ही किया अथवा जो आप करते हैं, अच्छा ही करते हैं। फिर भी मन यह स्वीकार नहीं कर पाता कि जो कुछ हुआ, अच्छा ही हुआ। मन में एक कचोट या चुभन–सी बनी रहती है।....

अगले महीने में 2 अक्टूबर को गांधी की जयंती है और लाल बहादुर शास्त्रीजी की भी। दोनों समय और संवेदना के सबसे बड़े हस्ताक्षर अपने–अपने समय में रहे हैं और जनता का प्रतिनिधि भी अपने समय और संवेदना के आधार पर किया है। दोनों को याद करना इस देश के लिए आवश्यक है और उपयोगी भी। जिनके मूल्य ही हमें वर्तमान के समय और संदर्भ से बचा सकते हैं, हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं और प्रतिनिधि भी।

सुखद है कि पत्रिका अपने 19वें सोपान से गुजरते हुए आपके समक्ष प्रस्तुत हो रही है, इस अंक में प्रकाशित होने वाले *प्रो. देवेन्द्र मोहन का* 'भारत में औद्योगिक एवं प्रौद्योगिक–विकास के संदर्भ में महामना की दूर–दृष्टि', *डॉ. सच्चिदानन्द देव पाण्डेय का* 'महाकवि पद्माकर की लोकोन्मुखी काव्य–दृष्टि', *शालिनी भट्ट का* 'पुष्टिमार्गीय भक्ति में अष्टयाम–सेवा–पद्वति', *सुधीर कुमार तिवारी एवं डॉ. सुहासिनी बाजपेयी का* 'भारत में समावेशी–शैक्षणिक–विकास : नीतियाँ एवं कार्यान्वयन' और *Dr. Raghavendra Mishra* & Amit Kumar Singh का A Study on Awareness of Corona Virus (Among the people of Brahmpur, District–Buxar, Bihar) आदि शोध–लेख विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।

अंत में मैं इस अंक के सभी शोध–लेखकों, पाठकों एवं 'आलोचन दृष्टि' परिवार के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनके सहयोग से शोध–पत्रिका का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत हो रहा है।

सितम्बर, 2020।

विषयानुक्रमणिका

1. भारत में औद्योगिक एवं प्रौद्योगिक-विकास के संदर्भ में महामना की दूर-दृष्टि — 01-05
प्रो. देवेन्द्र मोहन

2. व्यंग्य, मनोरंजन तथा पात्रानुकूल संवाद : 'रात बीतने तक' तथा अन्य ध्वनि नाटक — 06-8
प्रो. एस. वी. एस. एस. नारायण राजू

3. महाकवि पद्‌माकर की लोकोन्मुखी काव्य-दृष्टि — 9-15
डॉ. सच्चिदानन्द देव पाण्डेय

4. समकालीन कविता का वस्तु-विधान — 16-20
डॉ. रंजना पाण्डेय

5. भारत में समावेशी-शैक्षणिक-विकास : नीतियाँ एवं कार्यान्वयन — 21-26
सुधीर कुमार तिवारी एवं डॉ. सुहासिनी बाजपेयी

6. नजीर अकबराबादी की कविता में हिंदुस्तानी तहजीब — 27-30
डॉ. ज्ञानेंद्र कुमार

7. पुष्टिमार्गीय भक्ति में अष्टयाम-सेवा-पद्धति — 31-38
शालिनी भट्ट

8. मानवीय संवेदनाओं के सजग प्रहरी : मुंशी प्रेमचंद — 39-41
डॉ. विकास चन्द्र मिश्र

9. हिन्दी को समृद्ध बनाने में नागरी लिपि की भूमिका — 42-49
डॉ. प्रज्ञा पाण्डेय

10. 'अभ्युदय' के वस्तु-विन्यास का समय और संदर्भ — 50-53
कीर्ति त्रिपाठी

11. ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रशासन और डॉ. आंबेडकर की दृष्टि — 54-57
डॉ. शोभा कौर

12. कोविड-19 का प्रकोप और हिंदी कविता की भूमिका — 58-62
डॉ. एम. अब्दुल रजाक

13. 'वापसी' कहानी : समय और संवेदना — 63-66
आदित्य नाथ तिवारी

14. **A Study on Awareness of Corona Virus** (Among the people...) — 67-83
Dr. Raghavendra Mishra & Amit Kumar Singh

ജ★ഗ

भारत में औद्योगिक एवं प्रौद्योगिक-विकास के संदर्भ में महामना की दूर-दृष्टि

प्रो. देवेन्द्र मोहन*

स्वतंत्रता के सात दशक बीत जाने के बाद भी आज हमारा देश भारत विकासशील देशों की सूची से बाहर आने में असमर्थ रहा है। विश्व के अनेक देश हमारे, देश से वैज्ञानिक, तकनीकी, आर्थिक, सैन्य तथा अन्य क्षेत्रों में हमारे देश से काफी ऊपर गिने जाते हैं। आधुनिक काल की यह कड़वी सच्चाई हमारे देश के लिए सदैव से ऐसी ही नहीं थी। यह ऐतिहासिक सत्य है कि गुप्तकाल अविभाजित भारत के लिए स्वर्ण युग था तथा मुगल काल में भी हमारा देश आर्थिक रूप से संपन्न था तथा यहाँ पर विज्ञान व तकनीकी क्षेत्रों मे भी सराहनीय प्रगति हुई थी।

उपरोक्त सत्यों को किसी देश को अतिरंजन करने की आधारहीन कोशिश नहीं माना जाना चाहिए क्योंकि ऐसे कई ऐतिहासिक सत्यों को आधुनिक काल में पश्चिमी वैज्ञानिकों तथा इतिहासकारों ने भी मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। प्रसिद्ध इतिहासकार ए0 एल0 बाशम द्वारा प्रणीत विश्व प्रसिद्ध पुस्तक 'The wonder that was India' इस विषय में पठनीय कृति है। बौधायन द्वारा दिया गया (समकोण त्रिभुज के लिए) य^2 + र^2 = ल^2 ($X^2+Y^2=Z^2$) प्रमेय पाइथागोरस से कई शताब्दियों पूर्व दिया गया था। विश्व में सर्वप्रथम 'प्लास्टिक सर्जरी महार्षि सुजुत द्वारा की गई थी और उनके द्वारा अभिकल्पित (Derigned) कई औजार (Tools) आज भी सम्पूर्ण विश्व में शल्य क्रियाओं में प्रयुक्त किये जाते हैं। महर्षि चरक द्वारा विरचित 'चरक–संहिता में अनेक रोगों, उनके निदानों तथा उपचारों का वर्णन है। इन पुस्तकों को देखने से ज्ञात होता है कि कई रासायनिक तत्व, जिनके अविष्कार के लिए हम पश्चिमी सभ्यता को संपूर्ण श्रेय देते हैं, उनका आविष्कार (खोज) हमारे देश में बहुत पहले हो चुका था।

आचार्य शंकर द्वारा प्रणीत श्रीमद्भगवद्गीता के भाष्य में कहा गया है 'सप्तद्वीपा मेदिनी', जो स्पष्ट करता है कि भारतीयों को कम से कम सातवीं (ईसवी) शताब्दी से इस तथ्य का ज्ञान था कि पृथ्वी पर सात महाद्वीप हैं। वास्तव में यज्ञों में प्रयुक्त होने वाली वेदियों के विविध आकारों तथा क्षेत्रों/क्षेत्रफलों के सटीक निर्धारण के लिए गणित की कुछ शाखाओं का विकास क्रमशः होता गया था। कहा गया है, आवश्यकता अविष्कार की जननी है और इसी के कारण हमारे देश में विविध भौतिक, रासायनिक तथा जैविक क्षेत्रों से संबंधित विज्ञान की शाखाओं का ही उद्भव नहीं हुआ, बल्कि अनेक दार्शनिक विचारधाराओं का भी जन्म हुआ था। भारत के इतिहास में कभी भी इस बात के प्रमाण नहीं मिलते कि किसी व्यक्ति, वैज्ञानिक या दार्शनिक को इस कारण मृत्युतुल्य या तना या मृत्युदण्ड दिया गया हो कि उसकी विचारधारा या खोज उस समय प्रचलित दार्शनिक मान्यताओं, सिद्धान्तों या अन्य स्थापित धारणाओं से मेल न खाता हो। इस प्रकार भारतीय उपमहाद्वीप में न केवल अनेक सांसारिक महत्व की वस्तुओं के निर्माण हेतु विविध पदार्थों

*** जानपद अभियांत्रिकी विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।**

तथा तकनीकों का क्रमिक विकास हुआ, बल्कि अनेक आध्यात्मिक विचारों दर्शनों व मतों का भी प्रकटीकरण संभव हो सका। परम आस्तिकता से चरम नास्तिकता तक विस्तृत विविध (छः प्रमुख) दार्शनिक या आध्यात्मिक गंभीर विचाराधाराओं तथा उनकी शाखाओं और प्रशाखाओं की उपस्थिति उस समय के भारत में उपलब्ध वैचारिक स्वतंत्रता का जीवन्त प्रमाण है। संपूर्ण विश्व में जिस विचारधारा को वर्तमान समय में संधारणीय संपोष्य विकास (sustainable development) के रूप में जाना जाता है तथा विकास की प्रक्रिया में जिस अवधारणा का ध्यान रखना आवश्यक है, उसका सुदृढ़ भावनात्मक आधार ईशावास्योपनिषद के निम्नलिखित प्रथम मन्त्र में दृष्टव्य है– "ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किज्य जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुज्जीथां मा गृधः कस्य स्विद् धनम्।।" अर्थात् इस संसार में जो कुछ भी है, सब कुछ ईश्वरत्व (देवत्व) से ओत–प्रोत है। उसका त्याग की भावना के साथ उपभोग करना चाहिए, लालच नहीं करना चाहिए क्योंकि धन प्राकृतिक संसाधन किसका है (किसी का नहीं है)। वास्तव में जीवन को चलाने के लिए भोजन (विविध रूप में) अपरिह्रार्य है, समस्याये तब उत्पन्न होती हैं जब लोभ की दृष्टि संतुलित उपभोग की भावना पर भारी पडने लगती है। महात्मा गांधी का प्रसिद्ध कथन भी इस सत्य की ओर इंगित करता है। The earth can proride enough for every one's need, but not for even one man's greed. अपने देश के भौतिक विकास का प्रतिदर्श (Model) चुनते समय हमें उपरोक्त महान विचारों का समावेश अनिवार्य रूप से करना चाहिए। प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या ऐसा करना संभव है? कम से कम हम भारतीयों को इस प्रश्न का समारात्मक उत्तर पुनः खोजना चाहिए क्योंकि कभी इसी देश के वासियों ने इस प्रकार के धारणीय विकास को संभाव करके दिखा दिया था। मैहरौली का लौह स्तम्भ (1500 वर्ष से अधिक प्राचीन), सिंधु घाटी की सभ्यता में प्राप्त नर्तकी की मूर्ति आदि यह सत्य प्रामाणिक रूप से स्पष्ट कर देते हैं। यह एतिहासिक सत्य है कि आधुनिक युग में यूरोप (इंग्लैण्ड) में औद्योगिक क्रांति की के आरंभ में (1752 ई0 के आसपास) के समय भारत का सकल घरेलू उत्पाद (Gross domethic product) का सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था में अंश इंग्लैण्ड के अंश की तुलना में अत्यधिक (कई गुना) हुआ करता था। प्लासी के युद्ध (1757 ईसवी) के बाद भारी मात्रा में भारत से लूटे गये धन के द्वारा इंग्लैण्ड की औद्योगिक प्रगति में तेजी आयी और बाद में भेदभाव तथा बाधा–युक्त एकतरफा व्यापारिक नीतियों के द्वारा अंग्रेजों ने इंग्लैण्ड (युनाइटेड किंगडम) के पक्ष में तथा भारत के विरोध में लाभ की स्थिति पैदा कर दी। फलस्वरूप भारत उत्तरोत्तर धनहीन होता गया और अंततः एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में बदल गया, जबकि प्लासी के युद्ध के कई दशकों बाद तक भी भारत अंग्रेजों की अन्यायपूर्ण नीतियों के कार्यान्वयन के बाद भी वृहत् मिश्रित (कृषि और उद्योग आधारित) अर्थव्यवस्था के रूप में रहने में सक्षम बना था। इन घातक नीतियों में भारतीय उद्योग–धन्धों का दमनकारी पतन, ब्रिटेन के उत्पादों का बढ़ता आयात तथा भारत के कच्चे माल का निर्यात शामिल था, जिनके परिणाम स्वरूप भारत की जनसंख्या मुख्य रूप से कृषि पर आधारित हो गयी। धीरे–धीरे भारत की आर्थिक स्थिति को इतना जर्जर कर दिया गया कि यहाँ प्रायः भीषण अकाल पड़ने व उनसे बहुत बड़ी संख्या में मौतें होने की स्थितियां बन गयी।

भारत में 1800 से 1825 ई0 में पांच अकाल (दुर्भिक्ष) पड़े और फिर 1825 से 1850 तक दो 1851 से 1875 तक छः तथा 1876 से 1900 तक अठारह अकाल की आवृत्ति हुई। श्री डिग्बी नामक यूरोपियन इतिहासकार के अनुसार 1854 से 1901 तक सरकारी आंकड़ों के अनुसार 28,825,000 मौतें मात्र दुर्भिक्ष के कारण असमय ही हो गयीं। डिग्बी के ही अनुसार, मोटे अनुमान

के आधार पर यह कहा जा सकता था कि 19वीं सदी के अन्तिम तीन दशकों में दुर्भिक्ष और अभावपूर्ण स्थितियों की घटनायें लगभग एक शताब्दी पहले की तुलना में चार गुना अधिक होने लगीं तथा उनका विस्तार भी लगभग चार गुना हो गया। भारत के समृद्ध इतिहास, अंग्रेजों द्वारा बनायी गई गलत नीतियों और उनके दीर्घकालीन अन्यायपूर्ण कदमों के फलस्वरूप भारत एक अति समृद्ध राष्ट्र से अति विपन्न भूभाग में शनैः शनैः परिवर्तित हो गया। इसके बाद मैकाले की गलत शिक्षा नीति ने भारत के स्वर्णिम इतिहास को धूमिल करके यूरोपीय सभ्यता की (आधारहीन) उत्कृष्टता को मानव समाज द्वारा होने वाले विविध क्रिया कलापों सर्वोच्च सिद्ध करने का दुराग्रहपूर्ण एवं कुत्वित प्रयास किया।

भारत की इस विपन्नता का स्पष्ट कारण अंग्रेजों की गलत नीतियाँ ही थीं, इस बात को अनेक अंग्रेज विद्वानों तथा इतिहासकारों ने भी स्वीकार किया। उनमें से कुछ विद्वानों का संदर्भ देते हुए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के परमादरणीय संस्थापक भारत–रत्न महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय जी ने भारतीय औद्योगिक आयोग (Indian industrial commission) द्वारा प्रस्तुत आख्या (Report) पर अपनी विस्तृत टिप्पणी लिखी, जिसकों Note (of dissent) on Indian Industrial commission report (1916-1918) के रूप में जाना जाता है। पण्डित मदन मोहन मालवीय उस आयोग के तीन भारतीय सदस्यों में से एक थे, और इस असहमति की टिप्पणी को मूल आख्या के साथ संलग्नक (Appendix) के रूप में छापा गया था। विश्व प्रसिद्ध कलकत्ता विश्वविद्यालय इसको अपने कुछ विषयों के छात्रों को लम्बे समय तक पढाता रहा। इस आख्या को पढ़ने से महानता मालवीय जी के बहुआयामी व्यक्तित्व तथा उनके सम्यक ज्ञान की विविधता और गहनता के विविध आयामों से पाठकों का सूक्ष्म परिचय जैसा होता है तथा भारत के सम्पूर्ण विकास हेतु वास्तव में तत्कालीन समय में नीतियों और उनके कार्यान्वयन के स्तर पर क्या किया जाना समीचीन था, ऐसा स्पष्ट रूप से ज्ञात होता हैं। उस विस्तृत आख्या के कुछ भाग इस समय की परिस्थितियों में भी पठनीय, गंभीर रूप से विचारणीय तथा समुचित रूप से करणीय बने हुए हैं।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 1909 में हुए लाहौर अधिवेशन में अध्यक्ष पद से व्याख्यान देते हुए महामना मालवीय ने कहा, "राष्ट्रीय आय कम है और इसलिए राष्ट्रीय समृद्धि भी निम्न है। लोग प्लेग और मलेरिया से बहुत बड़ी संख्या में पर रहे हैं। दुर्भिक्ष से बहुसंख्या मौतें हो रही हैं और लोग असमृद्ध एवं दुःखी हैं। देश की यही दशा है। दूसरी तरफ यह दृष्टव्य है कि यह देश प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर है। इस देश के लोग न बुद्धि में कम हैं और न उद्यमिता में, तथा वे बहुत सादा जीवन जीते हैं, वे अपराधों के भी आदी नहीं हैं जैसा कि कुछ सबसे उन्नत देशों में है। क्या इससे भी अधिक दुःखद और निराशापूर्ण कुछ और हो सकता है कि लोग ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में हैं कि यह देश अन्य देशों की तुलना में इतनी निम्न स्थिति में है? और ऐसी स्थिति में मातृभूमि के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है?"

महामना मालवीय जी के प्रयासों के फलस्वरूप भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1904 में प्रथम बार भारत में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सर्वोत्तम तकनीकी व अभियांत्रिकी संस्थान के समतुल्य कम से कम एक संस्थान की स्थापना हेतु तत्कालीन सरकार से मांग की। महामना मालवीय के नेतृत्व में भारतीय औद्योगिक सम्मेलन (Indian Industrial conference) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक सम्मेलन से सम्बद्ध होकर 1905 (में प्रथम बार वाराणसी में आयोजित होकर) से प्रतिवर्ष आयोजित

होने लगा। 1906 में नैनीताल में आयोजित भारतीय औद्योगिक सम्मेलन में भी ब्रिटिश सरकार से यह मांग की गई कि वह देश में तकनीकी, औद्योगिक तथा वाणिज्यिक शिक्षा के लिए देशव्यापी व्यावस्था करे।

भारतीय औद्योगिक आयोग की आख्या (Report) पर महामना मालवीय जी अध्यक्षता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रस के तैंतीसवे (दिल्ली में आयोजित) अधिवेशन में विचार किया गया तथा मालवीय जी द्वारा लिखी गयी असहमतिपूर्ण टिप्पणी (Note of dissent) की भूरि–भूरि प्रशंसा की गई। इस टिप्पणी के अंत में मालवीय जी ने सारांश सदृश प्रस्तुत करते हुए फ्रेडरिक निकलसन को उद्धृत करते हुए लिखा था– "मैं अपनी राय भारतीय उद्योगों के बारे में देते हुए यह कहना चाहता हूँ कि ये प्रथम, द्वितीय और तृतीय (हर) स्तर पर भारतीय हितों का ध्यान रखें। प्रथम स्तर से मेरा अभिप्राय है कि स्थानीय कच्चे माल का उपयोग किया जाय; द्वितीय स्तर से यह कि उद्योगों को यहाँ लगाया जाय; तथा तृतीय, से यह कि इन समस्त उद्योगों द्वारा अर्जित लाभ भी इसी देश में रहे।"

मालवीय जी के अत्यधिक प्रयासों के बाबजूद ब्रिटिश सरकार ने कोई सार्थक ठोस कार्य करने में कोई विशिष्ट रूचि नहीं दिखायी। भारतीय औद्योगिक सम्मेलन तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा पारित प्रस्तावों का भी कोई विशेष प्रभाव नहीं दिख सका। अतः मालवीय जी ने देश की गरीबी व भुखमरी को मिटाने तथा तकनीकी औद्योगिक, कृषि, वाणिज्य, चिकित्सा जैसे क्षेत्रों के साथ–साथ कला, साहित्य, दर्शन आदि की एक साथ व्यवस्था हो सके ताकि उससे शिक्षा पाने वाला विद्यार्थी एकांगी व्यक्तित्व वाला असंतुलित व्यक्ति न होकर, मानवीयता की गरिमा व व्यक्तित्व की संपूर्णता व चारित्रिक सर्वोत्कृष्टता को प्राप्त कर सके। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संबद्ध 1905 में मालवीय जी द्वारा प्रस्तुत विवरण में स्थापत्य वेद या अर्थशास्त्र के एक कालेज के अलावा भौतिकी, रसायन शास्त्र तथा प्राद्योगिकी शिक्षा से संबंधित तीन विभागों को सम्मिलित किया गया। मालवीय जी का मत था कि तकनीकी शिक्षा का अंतिक उद्देश्य आर्थिक आत्मनिर्भरता की प्राप्ति होना चाहिए। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा उसके ही पुनरूद्भूत पुष्प भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) वाराणसी के तृतीय आदर्श में इसी महान विचार की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है जो कि इस प्रकार है, "To advance and diffase such scientific, technical and professional penouledge combined with the neeassary practioal training, as is best ealeulated to help in promoting indigenous industries and in developing the material resowas of the country."

यद्यपि सीमित रूप में अभियांत्रिकी शिक्षा भारत में 18वीं शताब्दी से प्रारंभ हो गयी थी, किन्तु ध्यान मुख्यतः विविल (जानपद/जनपदीय) अभियांत्रिकी पर केन्द्रित था और अन्य विधाओं का प्रारंभ यहाँ पर काफी बाद में हो सका। मालवीय जी प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने भारत में ही अभियांत्रिकी में स्नातक तथा बाद में उच्चतर उपाधियाँ प्रदान करने में सक्षम संस्थान की मात्र वृहत् रूपरेखा ही प्रस्तुत नहीं की, अपितु वैसे तीन बड़े अभियांत्रिकी कालेजों की भी स्थापना की। वास्तव में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय से संबद्ध उच्चतर शिक्षा विभाग की वेबसाइट (<http://www.education.nic.in/>) पर यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, "भारत में मैकेनिकल (यांत्रिक) तथा इलैक्ट्रिकल (विद्युतीय) अभियात्रिकी में उपाधि देने योग्य कक्षाओं को सर्वप्रथम प्रारम्भ करने का श्रेय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को जाता है, इसके महान संस्थापक

पण्डित मदन मोहन मालवीय की दूरदृष्टि को धन्यवाद।" यद्यपि अन्ना विश्वविद्यालय; थॉमसन अभियांत्रिकी कालेज, रूड़की; बंगाल इंजीनियरिंग कालेज, शिलपुर; पुणे अभियांत्रिकी कालेज, पुणे; तथा भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलौर, पहले से भी किसी न किसी रूप में देश की अभियांत्रिकी शिक्षा में कुछ योगदान दे रहे थे लेकिन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत विज्ञान तथा अभियांत्रिकी की विविध विधाओं में स्नातक स्तर की शिक्षा का महामना मालवीय जी द्वारा प्रस्तुत प्रारूप और क्रियान्वयन अपने ही प्रकार और समय का अद्वितीय और भारत भूमि में अभूतपूर्व प्रयास था। बनारस इंजीनियरिंग कालेज, खनन तथा धात्विक अभियांत्रिकी कालेज तथा प्राद्योगिकी कालेज नाम की तीन विख्यात शिक्षादायी संस्थाओं का विलय करके पहले प्रौद्योगिकी संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय निर्माण हुआ। बाद में 19 जून 2012 को भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) वाराणसी का स्वरूप प्रकट हुआ। तकनीकी शिक्षा के महत्व को, महामना मालवीय की दूरदृष्टि में, निम्न शब्दों में समझा जा सकता है जो कि 1911 के एक पत्रक (Pamphlet) से उद्धृत किये जा रहे हैं, यह प्रस्तावित किया जाता है कि (काशी हिन्दू) विश्वविद्यालय में यह (विज्ञान तथा प्राद्योगिकी) कालेज सर्वप्रथम स्थापित किया जाना चाहिए। भारत की वर्तमान अर्थिक स्थिति में शिक्षा की ऐसी कोई अन्य शाखा नहीं है, जिसकी आवश्यकता वैज्ञानिक तथा तकनीकी शिक्षा से बढ़कर हो।" इसी कारण (बनारस) इंजीनियरिंग कालेज (BENCO) तथा खनन और धात्विक अभियांत्रिकी कालेज की स्थापना क्रमशः 1919 तथा 1923 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में की गई। प्रो0 चार्ल्स ए. किंग BENCO के प्रथम प्रधानाचार्य नियुक्त किये गये। इसी प्रकार स्वतंत्रता पूर्व ही 1937 में 'Bachelor of Pharmacy' की स्थापना की गई तथा प्रौद्योगिकी कालेज भी देश के स्वाधीन होने के पूर्व ही काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का गौरवशाली अंग बन गया।

महामना मालवीय जी के महान व्यक्तित्व कृतित्व से प्रभावित होकर और उनकी दूर दृष्टि का अनुसरण करते हुए इन कालेजों से पढ़े छात्रों तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अन्य कालेजों तथा संकायों से शिक्षा प्राप्त छात्रों ने देश की स्वतंत्रता के लिए अमर बलिदान किये। विश्वविद्यालय के तत्कालीन शैक्षणिक वातावरण तथा आचार्यों के समर्पण भाव एवं देशप्रेम की गाथायें हमारे लिए वर्तमान समय में भी उद्बोधक तथा प्रेरणा दायक सिद्ध हो सकती हैं। स्वतंत्रता से पूर्व तथा उसके पश्चात् भी देश में शिक्षा का प्रसार आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व राष्ट्रीय महत्व के अन्य क्षेत्रों में प्रगति, विविध प्रकार के उद्योग धन्धों की स्थापना एवं प्रसार और इन सबके फलस्वरूप निर्धनता निवारण स्वास्थ्य की उन्नति के साथ–साथ युवाओं की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक शक्तियों के पुनर्गठन और प्रबलीकरण में इस महान विश्वविद्यालय की अग्रणी भूमिका रही है। इस महान परम्परा का वाहक होने के नाते भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (का0हि0वि0) वाराणसी को वर्तमान समय में हमारे समाज एवं देश के सम्मुख उपस्थित चुनौतियों के समाधान हेतु अपनी महती भूमिका का निर्वहन करने हेतु स्वयं को पुनः सन्नद्ध करना चाहिए।

व्यंग्य, मनोरंजन तथा पात्रानुकूल संवाद : 'रात बीतने तक' तथा अन्य ध्वनि नाटक

प्रो. एस. वी. एस. एस. नारायण राजू*

मोहन राकेश कृत नाटक 'रात बीतने तक' तथा अन्य ध्वनि नाटको' में प्रयुक्त संवादों में पर्याप्त विविधता पाई जाती है। व्यंग्यात्मक और मनोरंजनपूर्ण संवादों का प्रयोग भी पूर्णता से इस नाटक में दृष्टव्य है। यथा –

"विलोम : यह अनुभव करने की मैंने आवश्यकता नहीं समझी। तुम मुझसे घृणा करती हो, मैं जानता हूँ। परंतु मैं तुमसे घृणा नहीं करता। मेरा यहां होने के लिए इतना ही कारण पर्याप्त है। अग्निकाष्ठ का प्रकाश फिर कालिदास के चेहरे पर डालता है, और एक बात कालिदास से भी करना चाहता था। तुम कालिदास के बहुत निकट हो, परंतु मैं कालिदास को तुमसे अधिक जानता हूँ। वह चलते–चलते पुनः दोनों की ओर देखता है। फिर कालिदास की ओर देखता है।... तुम्हारी यात्रा शुभ हो, कालिदास ! तुम जानते हो, विलोम तुम्हारा भी हित–चिंतक है।
कालिदास मुझसे अधिक कौन जान सकता है ? विलोम के कंठ से तिरस्कारपूर्ण हँसी का स्वर निकलता है और विलोम की ओर देखता है।
विलोम अनचाहा अतिथि संभवतः फिर भी कभी आ पहुँचे, मल्लिका तब तक के लिए क्षमा चाहते हुए......"[1]

व्यंग्य के साथ विलोम मुस्कराकर वहाँ से चला जाता है। कालिदास क्षण–भर मल्लिका की ओर देखता रहता है। फिर वहीं से झरोखे के पास चला जाता है।

'स्वप्नवासवदत्तम्' में विदूषक और महाराज उदयन के बीच वार्तालाप भी मनोरंजनपूर्ण ढंग से आयोजित किया गया है।
विदूषक : अच्छा ! मैं आपको दूसरी कहानी सुनाता हूँ। एक नगर है। जिसका नाम है ब्रह्मदत! वहाँ काम्पिल्य नाम का एक राजा राज्य करता था।
राजा : क्या ?
विदूषक कहाँ है कि ब्रह्मदत्त नामक एक नगर है। जहाँ पर काम्पिल्य नामक एक राजा राज्य करता था।
राजा : अरे मूर्ख राजा का नाम ब्रह्मदत्त होगा और नगर का नाम काम्पिल्या
विदूषक : राजा ब्रह्मदत्त और नगर कम्पिल्य ?
राजा : हाँ !
विदूषक : ठहरिए ! पहले मुझे याद कर लेने दीजिए, राजा ब्रह्मदत्त। नगर काम्पिल्य, राजा ब्रह्मदत्त नगर काम्पिल्य, ब्रह्मा राजदत्त काम्पिल्य नगरिलय, कांपिल्य राजदत्त ब्रह्मा नगरीलय। अब आगे सुनिए न"[(2)]
इस नाटक में विदूषक ने महाराज उदयन का दिल बहलाने के लिए इस तरह की कहानियाँ सुनाता रहता है।

*** संकाय प्रमुख–समाज विज्ञान तथा मानविकी, तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय, थिरूवारुर, तमिलनाडु–610005।**

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में भी इसी तरह के व्यंग्य तथा हास्यसंवाद का चित्रण हुआ है, यथा–

अनुस्वार : मैं समझता हूँ कि कुंभ इस कोने में और, दूसरा दूसरे कोने में होना चाहिए।
अनुनासिक : मैं समझता हूँ कि कुंभ यहाँ पर होना ही नहीं चाहिए।
अनुस्वार : क्यों ?
अनुनासिक : क्यों का कोई उत्तर नहीं।
अनुस्वार : मैं तुमसे सहमत नहीं हूँ।
अनुनासिक : मैं तुमसे सहमत नहीं हूँ।
अनुस्वार : तो ?
अनुनासिक : तो कुंभ को भी रहने दिया जाए।
अनुस्वार : और ये वस्त्र ?
अनुनासिक : वस्त्र अभी गीले हैं। इसलिए इन्हें नहीं हटाना चाहिए।
अनुस्वार : क्यों ?
अनुनासिक : शास्त्रीय प्रमाण ऐसा है।
अनुस्वार : कौन सा प्रमाण है ?
अनुनासिक : यह तो मुझे स्मरण नहीं।
अनुस्वार : यह स्मरण है कि ऐसा प्रमाण है ?
अनुनासिक : हाँ।
अनुस्वार : तो ?
अनुनासिक : तो संदिग्ध विषय है।
अनुस्वार : हाँ तब तो संदिग्ध विषय है।
अनुनासिक : तो संदिग्ध विषय होने से वस्त्रों को भी रहने दिया जाए।
अनुस्वार : अच्छी बात है, वस्त्रों को भी रहने दिया जाए"[(3)]

यहाँ अनुस्वार और अनुनासिक की मूर्खता और विचारहीनता पर व्यंग्य के सहारे प्रहार करके नाटककार ने हास्य की योजना सफलतापूर्वक व्यक्त किया है।

संवादों का प्रमुख कार्य पात्रों के व्यक्तित्व का उद्घाटन माना गया है। व्यक्तित्व का अर्थ है जिसमें व्यक्ति की पूर्ण अस्मिता समाहित होती है। इसके अंतर्गत उसका बाहरी और भीतरी चारित्रिक वैशिष्ट्य का विवरण होता है। अर्थात व्यक्तित्व बाह्य रूप और आंतरिक सौष्ठव से मिलकर ही अपना रूप धारण करता है। पात्रानुकूल संवाद का उद्घाटन दो तरीकों से करते हैं। पहला, वक्ता के संवाद से स्वयं उसका व्यक्तित्व अनावृत होता है। द्वितीय, उसके संवाद दूसरों के चरित्र को व्यक्त करते हैं। नाटक के प्रत्येक संवाद किसी–न–किसी माध्यम से किसी–न–किसी पात्र की वैयक्तिक विशेषता को, उसके व्यक्तित्व को उजागर करते हैं। मोहन राकेश के संवादों को इस कार्य में सफलता कहाँ तक मिली है, उसका आकलन यह मोहन राकेश कृत नाटक 'रात बीतने तक' तथा अन्य ध्वनि नाटकों के माध्यम से देखा जा सकता है। 'रात बीतने तक' में इसी तरह के पात्रानुकूल संवाद का आयोजन किया गया
है। यथा –

'सुंदरी : नहीं.. संसार की दृष्टि इसे सहन नहीं करती। लोग पहले ही कहते हैं कि राजकुमार नंद ने मानवी से नहीं, एक यक्षिणी से विवाह किया है जो हर क्षण उन पर जादू किए रहती है।
नंद : ठीक ही तो कहते है
सुंदरी : (कृत्रिम रोष के साथ) ठीक कहते हैं ? मैं यक्षिणी हैं ?

नंद : सच कहूँ।

सुंदरी : हॉ – हाँ !

नंद : मैंने कभी यक्षिणी देखी नहीं। परंतु इतना कह सकता हूँ कि, तुम मानवी नहीं ! तुम्हारे जैसा रूप मानवी का नहीं होता।... तुम्हारी आँखों से मदिरा छलकती है, ओठों से मदिरा छलकती है, रोम–रोम से मदिरा छलकती है। फिर तुम कैसे कहती हो कि तुम मानवी हो ?... एक बार फिर वही शब्द कहो"(4)

सुदरी अपने आकर्षण के द्वारा राजा नंद को बाँधकर रखती है। नंद उस आकर्षण से मुग्ध होकर राज्य के बारे में सोचना भूल जाता है। इसीलिए राज्य के हर व्यक्ति सुंदरी को मानवी के बजाय एक यक्षिणी के रूप में देखने लगते हैं।

'कुँआरी धरती में भी नाटककार ने नाटक को जीवंत बनाने के लिए पात्रानुकूल संवादों को प्रस्तुत किया है। यथा–

'राधिका : न भइया, न! मेरा छः बच्चों का परिवार है। ऐसी बदनामी से तो पहले ही इनकी पंडा–वृत्ति, खराब हो रही है। जिसके घर में ऐसा अधर्म हो रहा हो, उससे लोग धर्म का कारज क्यों करेंगे ?

रजनी : तुम मुझे इतनी गिरी हुई क्यों समझती हो, बहन ? मेरी कुछ परिस्थितियाँ हैं, जो मुझे यहाँ ले आई है ! नहीं तो....

राधिका : ऐसा ही सतवंती हो तो क्यों नहीं अपने घरवालों को तीन पैसे का कारड़ लिखकर बुला लेती ? तुम्हारे घरवाले आ जाएँ। तो हमारे या किसी के कहने की कोई बात नहीं रह जाती। पर आगे–पीछे कोई हो तो...।

रजनी ऐसी बात न कहो, राधिका बहन! मेरे कारण घरवालों की क्या दशा हो रही होगी, उसका अनुमान मैं ही लगा सकती हूँ। फिर भी मैं उन्हें अपनी सूचना नहीं दे सकती। केवल कुछ दिनों की ही तो बात है। उतने दिन मुझे यहाँ काट लेने दो, बहन! उसके बाद मैं स्वयं ही...."(5)

इस नाटक में मोहन राकेश ने कुंआरी माँ की निस्सहायता और विवशता का चित्रण किया गया है। नाटककार मोहन राकेश ने नाटक के अनुरुप आवश्यकतानुसार व्यंग्य, मनोरंजनपूर्ण तथा पात्रों के अनुरुप संवादों का प्रयोग किया है।

संदर्भ–सूची :–

1. रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक, मोहन राकेश – पृ. सं. 114, 115।
2. रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक, मोहन राकेश – पृ. सं. 39।
3. रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक, मोहन राकेश – पृ. स. 121, 122।
4. रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक, मोहन राकेश – पृ. सं. 12।
5. रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक, मोहन राकेश – पृ. सं. 79, 80।

महाकवि पद्माकर की लोकोन्मुखी काव्य-दृष्टि

डॉ. सच्चिदानन्द देव पाण्डेय *

समय स्वयं में एक बहुत बड़ी छन्नी है, वह स्वयं सब वस्तुओं को,सारे आविष्कारों को, समस्त रचनाओं और सिद्धांतों को उपयोगिता और मूल्यवत्ता के आधार पर छाँट लेता है, और जिसमें कुछ विशेष शक्ति आगे के लिए उनकी उत्तरजीविता साबित करता है। जिसमें समय के साथ जीवित रहने की प्राणवत्ता नहीं रह जाती, उन्हें वह व्यर्थ कर देता है। इसी कारण संसार भर की समस्त रचनाओं में गीत कालजयी होते हैं। क्योंकि जब लिखने पढ़ने के सारे संसाधन नष्ट हो जाएँगे, तब भी गीत आदमी के मुँह में शेष रह जायेंगे। तमाम रचनाओं के भंडार में से गीत ही याद रह जाते हैं। गेय काव्य इसी तरह अपनी उत्तरजीविता सिद्ध करते हैं। जैसे चिड़ियों की दिनचर्या में और भी बातें होती होंगी लेकिन हम याद रखते हैं, तो सिर्फ उनका गीत। जिक्र करते हैं, तो सिर्फ उनके गीतों का। जो उनके द्वारा समवेत स्वरों में चहचहाहटों के रुप में गाए जाते हैं। उसी तरह जो कविताएँ समय की सजग धारा में सिर्फ 'बातों का संग्रह' साबित होंगी, वे भुला दी जाती हैं, और जिस में बिना किसी अतिरिक्त जद्दोजहद के सहज भावनाएँ अनुकूल लय में व्यक्त हो पाती हैं, वहीं शेष बच जाती हैं, लोक की स्मृति में। शेष उसे ही कहते हैं जो हमेशा कटते छँटते, घटते–घटाते अंत में बचता है।

महाकवि पद्माकर का समय आज की तरह स्वतंत्र लेखन का समय नही था। राजदरबार की लाइब्रेरियाँ ग्रंथों को सुरक्षित रखने का सबसे बड़ा माध्यम थी। दरबारी कविता ही कवि की आजीविका की गारन्टी देती थी। उस काल का मुहावरा था। –'निराश्रयाः न तिष्ठन्ते, पण्डिताः वनिताः लताः।' यानी पण्डित विद्वान, स्त्री और लता बिना आश्रय के नही टिक सकते, नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं। दरबार में काव्य शास्त्र विनोद के नाम पर आशु कविता की प्रतियोगिताएँ ही प्रिय थीं। पठंत के दंगलों का समय था। जो समा बाँध दे, चमत्कृत कर दे, वाहवाही बटोर ले, वहीं विजयी कवि और उसी को राजकवि बनने का गौरव मिलता था। जिनके पूर्वजों में कोई विद्वान और कवि होते थे। उनके कवि का मान प्राप्त करने और सुशिक्षित कहलाने के अवसर अधिक थे। पद्माकर की गति भी वही थी।उनके पिता भी कवि, तंत्रज्ञ, कर्मकाण्डी और विद्वान थे। पद्माकर जी को यह पाण्डित्य और कवित्व विरासत में मिला था। पद्माकर जी ने अपना परिचय इस प्रकार दिया है––

'भट्ट तिलंगाने को बुंदेलखंड वासी कबि सुजसप्रकासी 'पद्माकर' सुनामा हौं।
जोरत कवित्त छन्द छप्पय अनेक भाँति, संसकृत प्राकृत पढ़े जु गुनग्रामा हौं।
हय रथ पालकी गयंद गृह ग्राम चारु, आखर लगाय लेत लाखन की सामा हौं।
मेरे जान मेरे तुम कान्ह हौ जगत सिंह, तेरे जान तेरो वह विप्र हौं सुदामा हौं।।'[1]

आचार्य शुक्ल ने लिखा है– 'ऐसा सर्वप्रिय कवि इस काल के भीतर बिहारी को छोड़ दूसरा नहीं हुआ और इस सर्व प्रियता का एक मात्र कारण रचना की रमणीयता थी।... जिस प्रकार देश में इनका नाम गूँजा वैसा उनके बाद फिर आगे चलकर किसी और कवि का नहीं।... जिस प्रकार ये अपनी परम्परा के परमोत्कृष्ट कवि हैं। वैसे ही प्रसिद्धि में अन्तिम भी।' पदमाकर १८१० में सागर जिले में जन्म लेकर ८० वर्ष की सुखद उम्र पारकर अन्त में विद्यापति की ही

पूर्व शोध छात्र, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

भाँति गंगा किनारे कानपुर में अपना शरीर त्याग दिया। यह एक संयोग है कि मैथिल कोकिल, रससिद्ध कवि विद्यापति ने भी अन्त में बेगूसराय के (आधुनिक विद्यापति नगर) के पास गंगा तट पर प्राण त्यागा, पं. जगन्नाथ ने गंगा घाट बनारस में और पद्माकर ने कानपुर में। तीनों ही कवि गंगा के पास अपने अन्त की कामना से ही गये थे।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के लगभग पचासवर्ष पूर्व से स्वाधीनता की ललक रीति काव्य में कहीं कही प्रच्छन्न रुप में मिलने लगी थी। पद्माकर का दौलतराम सिंधिया के समक्ष पढ़ा गया यह छंद इसी बात का सूचक है कि अंग्रेजों से पीछा छूटने का भविष्य कैसे हाथ लगे–

'मीनागढ़ बंबई सुमंद करि मंदराज, बंदर को बंद करि बंदर बसावैगो।
कहै पद्माकर कटा कै कासमीर हूँ को, पिंजर सों घेरि कै कलिंजर छुड़ावैगो।
बाँका नृप दौलत अलीजा महाराज कबौं, साजि दल दपटि फिरंगिन दबावैगो।
दिल्ली दहपट्टि ,पटना को झपट्टि करि, कबहुँक लत्ता कलकत्ता को उड़ावैगो।।'[2]

जनाकांक्षा की यह एक गुप्त झलक मिलती है पद्माकर के यहाँ।

यह तय है कि जो कवितायें बनाई नहीं गई हैं, बल्कि घटित हुई हैं– अंतःकरण में। वे काल की मार झेल कर भी शेष बच जाएँगी। जो गढ़िया कवि हैं, यानी बुद्धि के जोर से काव्य करते हैं, इतिहास के पन्नों में गुम हो जाएँगे और जो जड़िया कवि हैं, जिनकी कविताओं में प्राकृतिक जीवनी शक्ति है, वे इतिहास के ह्रदय पर अंकित हो जायेंगे। वही कालजयी होंगे। यही कारण है कि आज 200 सालों के बाद भी कि हम पद्माकर को चाव से पढ़ते हैं और उनकी काव्य कला पर मुग्ध होते हैं। अगर कविता में शक्ति है तो उसे सब तरफ इश्तहार की तरह फैलाने की जरूरत ही नहीं पड़ती। उसकी श्यानता और प्रवणता की शक्ति ही लोक मानस के पटल पर उसे प्रसारित कर देती है। आचार्य शुक्ल ने आगाह कर दिया था कि आने वाले समय में मनुष्य की प्रवृत्तियों पर सभ्यता के आवरण चढ़ते जाने से कविता की आवश्यकता बढ़ेगी। बेतहाशा बढ़ते पूँजीवादी होड़ में कविता ही ह्रदय को स्वार्थ सम्बन्धों की संकीर्ण कारा से मुक्त कर सकती है। वही ह्रदय को अधिक मानवीय और पर दुखकातर बनाती है। लेकिन समय के साथ कवि कर्म कठिन होता जाएगा। क्योंकि जटिलताओं से भरे युग में ह्रदय की मुक्ति आसान नहीं रह जाएगी। पद्माकर हौ निज कथा, का सौ कहौ बखान।/जाहि लखौं ताहै परी अपनी अपनी बानि।।(पृ. 110)

पद्माकर की कविताई की विशेषता है कि वह मुक्त ह्रदय की उड़ती हुई कविता है। कवि होने के लिए शब्दों की समझ, वाणी पर अधिकार मूर्ति विधायिनी कल्पना की प्रतिभा के साथ उच्च कोटि की भावुकता जरूरी है। इसी से कविता उत्कृष्ट होती है।शब्द मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी नैसर्गिक उपलब्धि है। इसकी शक्ति आकाश की तरह पर अपरिमेय होती है। दर्शन में शब्द को आकाश का ही विषय कहा गया है। वह अनंत शक्ति संपन्न होता है। बहते समय को दर्ज कर लेना इन्हीं शब्दों के द्वारा संभव हो पाता है कवि अपने बिंब अपनी कल्पना को इन्हीं शब्दों से चित्रित करता है।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने कहा है–'कविता अंतःकरण की वृत्तियों का चित्र है।' चित्र समर्थ शब्दों से ही निर्मित किया जा सकता है। पद्माकर सरस और भव्य चित्रों के धनी कवि हैं। गंगा लहरी में एक बड़ा चित्र है जो गंगा की छवि से संबंधित है–

'कूरम पै कोल कोल हू पै सेस कुंडली है, सेस कुंडली पे फैल सुफन हजार की।
कहैं पदमाकर त्यों फन पे फबी है भूमि, भूमि पे फबी है थिति रजत पहार की।।
रजत पहार पर संभु सुर नायक हैं, संभु सुर नायक पे जटा जूट ब्याल की।

जटा जूट ब्याल पे सुचंद की छुटीहै छटा चन्द की छटान पे छटा है गंगाधार की।[3]

इस चित्र में चन्द्रमा की अमृतरश्मियों से घुली मिली उज्ज्वल गंगधार की अमृतमयता भी संप्रेषित हुई है।

कविता की लय ही सहृदय पाठक को उसमें लीन करती है। इसी के द्वारा पढ़ने का सुख काव्य रसिकों को मिलता है। पढ़ती हुई जीभ को छन्दों के प्रवाह में फिसलने में, अर्थ लगाते हुए मस्तिष्क को और भावों पर मुग्ध होते मन को जो सुख मिलता है, वह शीतल समीर में अपना पसंदीदा श्रम करते हुए तरोताजा होने का सुख है। लय कविता में गेयता अथवा संगीत की जनक है। संगीत के बारे में कहा गया है कि ––'श्रुति माता लयः पिता।' श्रुति यानी स्वर (ह्रस्व–दीर्घ) का सुंदर उच्चारण प्रयत्न ही संगीत की माँ है, और लय उसको पोषित विकसित करने वाला उसका पिता।

जैसे ईंटों को गढ़ते जाने से मकान की वक्रता रूप ग्रहण करती है, भूमि के ढालू होते जाने से नदी की धारा अपना रूप लेती जाती है, वैसे ही सुगठित शब्दों के सहज प्रयोग से कविता में लय आती है। उस लय के सहारे पाठक, वाचक और गायक की अपनी–अपनी धुन उसमें सौंदर्य की सृष्टि करती है। लय के सहारे ही पुराने छंदों सवैया, कवित्त या पद आदि गाते हुए पुरनिये उसमें तन्मय हो जाते हैं। यह भी सत्य है कि कविता की लय कवि के अन्तःकरण में पैठी जीवन की लय होती है। जिसका हृदय जीवन की बहुआवर्तिनी गति से जितना सामंजस्य बनाकर चलता है।उसकी कविता में उतनी ही मुग्धकारी–भावानुकूल लय उपस्थित होती है।

लय ही कविता में सौन्दर्य सृष्टि का एक महत्वपूर्ण कारक है। जिससे कविता जीवंत बनती है। सौन्दर्य एक समग्र आनुपातिक प्रभाव है, लावण्य की तरह। सम्पूर्ण सौष्ठव का प्रतिफल है––'यत्तत् प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवांगनासु।।' जैसे लावण्य शरीर के अंगों से अलग उसके अवयवों के आनुपातिक सौष्ठव की समग्र अभिव्यंजना है,वैसे ही कविता का सौन्दर्य उसके भावपूर्ण –अर्थ, लय ,शाब्दिक विन्यास और उनके औचित्यमय प्रयोगों के आनुपातिक सामंजस्य से व्यंजित होता है। यही सौन्दर्य कविता के दीर्घ जीवन का हेतु बनता है। कवि अपनी कविता में शब्दों के ही माध्यम से अपने समय व समाज का वास्तविक चित्र खींचता है। उसके सौन्दर्य बोध या यथार्थ की विरुपता को दर्ज करता है। जीवन और जगत के अनगढ़ और सुगढ़ रूपों को वह अपनी शब्द–सिद्ध प्रतिभा से ही रूपायित करता चलता है।

पद्माकर रीतिकाल के अंतिम प्रसिद्ध कवि माने जाते हैं। उनकी कविता सुन्दर ग्राम्य जीवन के अत्यन्त सामान्य दृश्यों से पटी हुई है।

'मो बिन भाई न खाइ कछू पद्माकर त्यों भई भाभी अचेत है।
वीरन आये लिवाइबे को तिनकी मृदुबानि हू मानि न लेत है।
प्रीतम को समुझावति क्यों नहीं ,ये सखी तू जु पै राखति हेत है,
और तो मोहि सबै सुख री दुख री यहै माइके जान न देत है।।'......
है नहि माइको मेरी भटू यह सासुरो है सबकी सहिबौ करौ।
त्यों पद्माकर पाइ सोहाग सदा सखियानहुं को चहिबौ करौ।
नेह भरी बतियाँ कहि कै नित सौतिन की छतियाँ दहिबौ करौ,
चंदमुखी कहें होती दुखी तौ न कोऊ कहैगो ,सुखी रहिबो करौ।'[4]

चिट्ठी पाती की भी खबर मिलती है पद्माकर के यहाँ––

'पाती लिखी सुमुखि सुजान पिय गोबिंद को, श्रीयुत सलोने स्याम सुखनि सने रहौ।
कहै पदमाकर तिहारी छेम छिन छिन, चाहियतु प्यारे मन मुदित घने रहौ।
विनती इती है के हमेसहू मुंहै तो निज, पाइन की पूरी परिचारिका गनै रहौ।
याहीं में मगन मनमोहन हमारो मन, लगनि लगाइ लाल मगन बने रहौ।।'[5]

शृंगार वर्णन में,नायिका भेद में, भक्ति के पदों में प्रायः सब दृश्य तो पदमाकर ने अपने लोक जीवन से ही उठाये हैं। कविता भला अपना कथ्य और कहाँ पा सकती है। किशोर, किशोरियों की शृंगारिक चेष्टाएँ गले में बाँहें डाले घूमना, बछड़े गायें, सखियों की वार्ताएँ देहरी, घरबार, नदी कुंज, चरवाहे, व्यापारी, फेरीवाले, मित्र परोसी सास ननद इत्यादि के वर्णन में पद्माकर के समकालीन सामाजिक जीवन के चित्र सर्वत्र बिखरें हैं। उनकी कविताएँ आम कदंब की सघन छाँह जैसी विपुल हैं।

रीतिकाल के कवि शब्द सिद्ध कवि थे।उन्होंने शब्दो के साथ जितनी मेहनत की है,उसकी लक्षणिकता ,उसकी व्यंजना और उसके संसर्ग में आने वाले जीवन के विविधवर्णी पक्षों को जितने लाघव से अपनी कविता में प्रतिष्ठित किया उतन ा हिन्दी के अन्य काल के कवियो में दुर्लभ है। पद्माकर की प्रतिभा भी इस मामले में बहुदैशिक है। शृंगार से लेकर दार्शनिक पक्ष मे संचरण शील कवि ने अपने समय और समाज को चित्रित करने में पर्याप्त सफलता पायी।

शब्दों के अदभुत पारखी, शब्द प्रयोग में चतुर और उसके अर्थ को व्यापक बनाने की कुशलता के कवि थे पद्माकर। उनका जीवन राजसी ऐश्वर्य के बीच बीता। उस जीवन की ईमानदार प्रस्तुति इनके काव्य मे है। अपने जीवनानुभवों के विरुद्ध स्थितियों के वर्णन की कृ त्रिमता उनमें नहीं थी। पद्माकर मूलतः शृंगार के कवि के हैं। उनकी एक उक्ति– 'हौं तो स्याम रंग में चोराई चित चोराचोरी बोरत तो बोर्यो पै निचोरत बनै नहीं।'[6]

यह एक अविस्मरणीय क्षण की अद्भुत पंक्ति है– जब रुप के रस मे डूबा हुआ मन निचोरा नही जाता। पद्माकर की रूप गर्विता नायिकाएं जब सामने आती हैं तो गजब गुजारति गरीबनि की धारि पर।'

प्रेम रंग में डूबा उनका एक और दृश्य है––

आई खेलि होरी घरै नवल किसोरी कहूँ, बोरी गई रंग में सुगंधनि झकोरै है।
कहै पदमाकर इकंत चलि चौकी चढ़ि हारन के बारन तें फंद बंद छोरै है।।
घाँघरे की घूमनि सु उरून दुबीचे दाबि, आँगी हूँ उतारि सुकुमारि मुख मोरै है।
दंतनि अधर दाबि दूनरि भई सी चाँपि चौवर पचौवर कै चूनरि निचोरै है।।'[7]

सामान्य से चित्र का इतना अद्भुत चित्रांकन किसी रस सिद्ध चतुर कवि के ही बस की बात है। जिसमें शब्दों की सामर्थ्य से शृंगार की आत्मा दिखला दी है कवि ने।

कवि ने लोक जीवन में फैले सौन्दर्य के ऐसे ऐसे दृश्यों की अनेक दृश्यावलियाँ चित्रित कर के रख दी हैं–जिनके सहज मार्मिक हाव–भाव रसिकों के मन को मथ देने में बहुत ताकतवर हैं।इसी कारण पद्माकर रसिकों के कंठहार रहे हैं।उदाहरण के लिए– भारतेन्दु और द्विवेदी युगतक उनके अनुकरण में कविता होती रही। एक बहुत प्रसिद्ध समस्यापूर्ति जो बदरी नारायण चौधरी प्रेमधन जी ने लिखी है। उसका मूल बीज पद्माकर के यहाँ मौजूद है–

प्रेमघन जी के यहाँ मौजूद है–

'चित चैत की चाँदनी चाह भरी,चरचा चलिबे की चलाइये ना।'

पद्माकर की पंक्ति है–––

'चैत की चाँदनी चारु लखे,चरचा चलिबे की लगे जु चलावन।
कैसी भ ई तुम्ह गंग की गैल में,गीत मदारिन के लगे गावन।।'

पद्माकर ने प्रेम की भावभरी मूर्ति खड़ी करने में , रस की धारा बहाने में अनुप्रासों की झंकार उत्पन्न करने में जितनी सफलता पायी है। उतनी ही प्रशान्त भक्ति के उन्मेष में भी। इनकी भाषा और सुरंग दृश्यों में अनेक रुपता और विविधता के दर्शन होते हैं। सच्चाकवि हृदय था पद्माकर के पास। सच्ची प्रेरणा थी काव्य की।और अव्यक्त भावनाओं को मुग्धकारी रूप में प्रस्तुत कर देने की विलक्षण क्षमता थी। जहाँ पाठक और श्रोता उनसे सहज जुड़ाव महसूस करने लगते हैं।

पद्माकर के अनुप्रास उनके दृश्य विधान को और मूर्त कर देते हैं– सटीक शब्दों का एक अद्भुत गुंफन उनकी शब्दकोषीय विपुलता और प्रतिभा की प्रखरता का प्रमाण है।

वृक्षों के चित्रण का एक उदाहरण है– इसमें आम, कदंब, अनार, अगर और असोक आदि वृक्षों का एक सामूहिक सचल दृश्य है। जिसमें आठ से अधिक क्रियाएँ एक ही साथ वृक्षों–लताओं की स्थिति दिखाने में बड़ी खूबसूरती से अनुप्रास की कला के साथ गुंफित कर दी गयी है–

फूलि रहे, फलि रहे, फबि रहे, फैलि रहे।/झपि रहे, झूलि रहे, झुकि रहे, झूमि रहे।।(जगद्विनोद–116)

दूसरा उदाहरण है–

'साजि चतुरंग चमू जंग जीतिबे के हेतु हिम्मत बहादुर चढ़त फर फैल पै।
लाली चढ़ै मुख पै, बहाली चढ़ै बाहन पे, काली चढ़ै सिंह पै, कपाली चढ़ै बैलपर।।

लाली, बहाली(बिजय श्री), काली और कपाली(शिव) के अपने उपयुक्त अधिष्ठानों पे चढ़ने का सामूहिक दृश्य बड़ी अनुशासित शब्द सजगता के साथ प्रस्तुत है।

पद्माकर की कविता उनके समय से आज के समय का अन्तर भी प्रकट कर देती हैं और हमें एक बहाने से ही सावधान करती है– अब वे दृश्य कहाँ रह गये हैं, कमलों भरा तालाब, कुएँ पनघट, उपवन, कुंज, ग्राम, जीवन का वह नैसर्गिक प्रेम, पड़ोसी से भाईचारा आदि अब कविताओं के अलावा कहाँ दिखता है! पद्माकर को पढ़ने से एक चिन्ता यह मन में उठने लगती है, इतने वर्षों में प्राकृतिक परिवेश की जो क्षति हुई है। उसकी भरपाई कैसे संभव होगी! हवा, पानी, जंगल, पहाड़, खेत प्रेम प्राकृतिक जीवन सबका संहार करता जा रहा है मनुष्य। कितना कुछ बदल चुका है। चित्त को रसमग्न करने वाले नयनाभिराम दृश्य धीरे धीरे गायब हो चले हैं।

समाज को ऊँचा उठाने के लिए महान आदर्शों की जरुरत पड़ती है। भावों के उत्कर्ष के लिए हृदय के लोकजीवन में घुलमिल जाने के लिए भक्ति, प्रेम ,करुणा ,मैत्री और बन्धुत्व आदि की आवश्यकता पड़ती है। ग्यान में गुमान होता है।जब तक अहं नष्ट नही होता तब तक मन के पथभ्रष्ट होने की संभावना रहती है। भक्ति में मन की जो दशा होती विनय की,दैन्य की ,मानमर्षता की, वह अहंकार की अनुपस्थिति से ही संभव है।भक्ति मन का मैल मिटाती है। यह 'जन मन मंजु मुकुर मल हरणी' होती है। इसी कारण प्रायः जीवन का सार समझते समझते अन्त में व्यक्ति का मन भक्ति की ओर मुड़ने लगता है। वह अधिक सामाजिक होने लगता है। अधिक सात्विक होने लगता है। तुलसी ने इसी चिंता को 'गोरख जगायो जोग, भगति भगायो लोग' कहकर व्यक्त किया है।

समाज के चित्त–सन्तुलन के लिए जनता के हृदय में योग और भक्ति दोनों का होना जरुरी है। योग के जागरण के साथ भक्ति को भुला देने से उसका कठोर पक्ष उभरेगा। किन्तु

कोमल पक्ष दबेगा। गाँव के हरिकीर्तन में अधिक लोग जुटते हैं।जबकि योग की कक्षाओं में कम। नगरीय जीवन में इसके उलट दृश्य भी देखने को मिलते हैं।इसका कारण है कि भक्ति में कुंठाएँ औपचारिकताएँ व्यवहार का व्याकरण और बन्धन नही है। इसलिए यह बड़े पैमाने पर समाज जीवन को एक सूत्र में बाँधने की क्षमता रखती है। .....योग तो व्यक्तिगत मुक्ति का मार्ग है,जहाँ व्यक्ति अपनी स्वतंत्र सत्ता को उभारता और समाजोपयोगिता की अपनी कोमल भावना से दूर होता जाता है। इस पक्ष से लघु मानव के जीवन का अन्तिम सम्बल बनती है भक्ति।

रीतिकाल के भी आचार्यो ने अन्त में भक्ति के सुन्दर छन्द लिखे हैं।यह उनके स्वयं के अहं विसर्जन का माध्यम और उसके द्वारा हृदय की व्यापकता की आत्म स्वीकृति का साधन बनी। भक्ति में कवि अपने को पतितों का पतित बताकर ईश्वर की करुणा ,समाज की सहानुभूति प्राप्त करने की ओर उन्मुख होता है।

'भाये पद्माकर न तैसे भाग जज्ञन के, जैसे भगवानै भीलनी के फल भाये हैं।
भोजन की सामा सत्यभामा की भुलाई भलै, दुखी वा सुदामाके सुचाउर चबाये हैं।
छप्पन सुभोग दुरजोधन के त्यागि करि, आसा गहि वेग ते विदुर घर आये हैं।
धारा धाये फिरत वृथा पे नेम नीरधि में, पाये जिन राम तिन प्रेम ही ते पाये हैं।'[8]

भक्ति के उद्बोधक भावुक भक्त भगवान के जो आदर्श चरित्र या प्रसंग गाते हैं,वे समाज जीवन में अनन्य प्रेम प्रतिष्ठा के आदर्श बनकर ही अमर हुए हैं। जनता को जहाँ बिना भेदभाव जन सामान्य के सुखदुख बाँटने का प्रयत्न दिखता है ,उसे ही वह अपने आदर्श के रूप में स्वीकृति देती है। यही लोकनायकत्व की कसौटी है।

पद्माकर के आराध्य लोकरक्षक राम हैं। संभवतः इसीलिए क ई जगह पद्माकर के दैन्य भाव तुलसी से बहुत मिलते हैं–––

'पेट के बेट बेगारहिं में, जब लौं जियना तब लौं सियना है।'
'हौं तो न लोटतो लोभ लपेट में, पेट की जौ लौ चपेट न होती।'

तुलसी के यहाँ भी इस तरह का भाव व्यक्त हुआ है–

पेट को पढ़त ,गुनगहत चढ़त गिरि, अटत गहन बन अहन अखेटकी।
ऊँचे नीचे करम ,धरम अधरम करि, पेट ही को पचत बेचत बेटा बेटकी।।"

पद्माकर ने ऐसी निश्छल भाव की वंदनाएँ की हैं जिन्हें देखकर सहसा तुलसी का भ्रम हो जाता है–

'व्याध हूँ ते विहद असाधु हौं अजामिल तें, ग्राह ते गुनाही कहा तिन में गिनाओगे।
सेवरी हौं न शूद्र नहि केवट की नैया नहीं गौतमी त्रिया जापर पग धरि आओगे।।
राम से कहत पद्माकर पुकारि तुम मेरे महापापन को पार हूँ न पाओगे।
सीतासी सती को तज्यौ झूठे हूँ कलंक सुनि साँचों हूँ कलंकी ताहि कैसे अपनाओगे।।[9]

स्थानीय रामलीलाओं में पद्माकर के कतिपय छन्द/कवित्त बड़े चाव से बोलते हुए सुने जाते रहे हैं––

उदाहरण के लिए हनुमान की यह उक्ति–

'वारि टारि डारौं कुम्भकर्णै विदारि डारौं, मारौं मेघनादै आजु यों बल अनन्त हौं।
अच्छहि निरच्छ कपि रुच्छ ह्वै उचारि तो सो तुच्छ तुच्छन को कछु ना गनंत हौं।'

जिस तरह संस्कृत के महाकवि पं.राज जगन्नाथ ने गंगा लहरी में अपने उद्धार की बड़ी मार्मिक उक्तियाँ प्रस्तुत की हैं–

> बधानद्रागेव द्रढ़िम रमणीया परिकरैः, किरीटे बालेन्दुं नियमय पुनः पन्नग गणैः।
> न कुर्यात्तव हेलामितरजन साधारणधिया जगन्नाथस्यायं सुरधुनि समुद्धार समयः।।'

ठीक ऐसी ही मार्मिक चुनौती पद्माकर ने भी अपने आराध्य के समक्ष रखी है–

> 'या तें गुह गीध लौ सुवीधियों न मोसो राम, मेरी गति घोर या कठोर कमठिन है।
> लंकगढ़ तोरिबे ते रावन सो रोरिबे ते, मोहि भव बंधन ते छोरिबो कठिन है।'[10]

इस तरह पद्माकर अपनी कविताई में संस्कृत की भावपूर्ण कवि परम्परा से लेकर तुलसी तक के भावबोध को समाये हुए हैं। आधुनिक हिन्दी कवि परम्परा में लगभग भारतेन्दु युग के कवियों तक वे अपनी विदग्धता और भावप्रवणता के बूते सबसे प्रिय प्रेरणास्रोत रहे हैं।

रीतिकाल अपनी अतिशय शृंगारिक वृत्ति के कारण एक बदनाम काल रहा है। लेकिन जैसे वेदों में सत रज तम तीनों गुण मौजूद हैं।वैसे ही रीतिकाल के भीतर भी कई कवियों में सच्चे सौन्दर्य और सत्वमयी भक्ति की शेषधारा भी प्राणवायु की तरह प्रवाहमान रही है। रीतिकाल के कवि अपने समय और समाज से जैसे प्रभावित होते रहे,वैसे ही इन्होंने अपने समय और परवर्ती पीढ़ियों तक को प्रभावित भी किया।

संदर्भ–सूची :–

1. पद्माकर पंचामृत–संपादक, पं.विश्वनाथ प्रसाद मिश्र–श्रीरामरत्न पुस्तक भवन ,काशी, पृष्ठ. १२।
2. वही,पद्माकर पंचामृत– पृष्ठ– १५।
3. गंगा लहरी–छन्द–, 3।
4. पद्माकर पंचामृत–पृष्ठ–६३।
5. वही–पृष्ठ–६०।
6. पद्माकर पंचामृत।
7. पद्माकरपंचामृत–पृष्ठ–६८।
8. प्रबोध पचासा––छन्द–४७।
9. प्रबोध पचासा––छन्द–१५।
10. वही छन्द–१४।

समकालीन कविता का वस्तु-विधान

डॉ. रंजना पाण्डेय *

ऐसा कहा जाता है कि समकालीन कविता खुद शिल्प के चंगुल से बाहर निकलने के प्रयास की कविता है। कविता में शिल्प के नाम पर जो सबसे पहली छवि उभरती है, वह है छंद और अलंकारिकता की, सजावट की है। निश्चित रूप से समकालीन कविता इससे बहुत दूर है। कोई भी रचना चाहे वह कविता हो या कहानी हो या उपन्यास हो वह अपने कथ्य के साथ जिस रूप में हमारे सामने आती है वही उसका सबसे बेहतर रूप होता है। इस तरह भी कहा जा सकता है कि अच्छी रचनाएं स्वयं अपना शिल्प गढ़ लेती हैं। नामवर सिंह कहते हैं कि अंतर्वस्तु ही बिना किसी विशेष प्रक्रिया के रूप धारण कर लेती है। इसमें कोई दो राय नहीं की शिल्प कविता को दुरूह बना सकता है। समकालीन कविता के सबसे वरिष्ठ कवि केदारनाथ सिंह जो पहले स्वयं गीत लिखा करते थेय बाद में उन्होने मुक्त छंद अपना लिया। जब एकबार उनसे पूछा गया की उन्होंने गीत लिखने क्यों छोड़ दिये तब वे बोले की गीत की पहली पंक्ति एक तानाशाह की तरह व्यवहार करती है। उनका ईशारा भी शिल्प की वजह से संवेदना पर पड़ने वाले प्रभाव की तरफ था। कथ्य और संवेदना के स्तर पर आधुनिक हिन्दी कविता ने नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। समकालीन कविता ने तो इसे सामान्य जन के और नजदीक ले जाने का काम किया है। न सिर्फ पढ़ने के स्तर पर बल्कि लिखने के स्तर पर भी इसकी पहुंच उन लोगों तक हुयी है जो शायद इसके पहले कभी नहीं थी। आज के समय में जितने कवि कविता लिख रहे हैं उतने पहले कभी नहीं रहेय यह सिर्फ इतना भर नहीं है की आज अवसर बढ़ गए हैं, प्लेटफार्म मिल गए हैं बल्कि वाकई यह शिल्प की फ्लेक्सबिलटी है जो नए से नए कवि को लिखने का साहस दे रही है।

कविता और उसके रूप का संबंध दो अलग अलग सत्ताओं के संघर्ष का इतिहास नहीं है। रूप और वस्तु दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जैसे शब्द और अर्थ। शब्दार्थो सहितं काव्यम। दोनों की स्थिति समान महत्वपूर्ण होती है। दोनों परस्पर–स्पर्धी होते हैं। तुलसीदास ने भी कहा है कि 'गिरा अरथ जल बीच सम, कहियत भिन्न न भिन्न'। इसे हम इस तरह भी समझ सकते हैं। जैसे लड्डू होता है। लड्डू की मिठास उसकी अंतर्वस्तु है और गोलाई उसका रूप। लड्डू के लिए दोनों का समान महत्व है। किसी एक से काम नहीं चल सकता। जैसे ही लड्डू का नाम आता है वैसे ही मन–मस्तिष्क में जो छवि उभरती है वह गोल और मीठी वस्तु की ही उभरती है। यदि वह गोल न होकर अंडाकार या लंबोतर हो तो उसे लड्डू कहने में हिचक होगी। लड्डू होने की पहली शर्त है उसका गोला होना। इसी तरह से उसका मीठा होना भी अनिवार्य है। यदि वह मीठा न होकर नमकीन होगा तो खाने वाले का रसभंग हो जाएगा। कविता में वस्तु और रूप का संबंध भी इसी तरह का होता है। 'घी का लड्डू टेढ़ा भला'– अर्थात रूप में थोड़ा बहुत टेढ़ापन तो चल सकता है लेकिन यह सिर्फ घी जैसी बहुमूल्य अंतर्वस्तु के लिए है। लेकिन इसका निर्वाह इतना आसान भी नहीं है, इसीलिए समकालीन कविता ने विचार के नाम पर कविता की लय के साथ अत्यधिक छेड़–छाड़ की है। कई बार यह बलात भी होता है। उच्चार और विचार का समन्वय दुःसाध्य है। तुलसीदास ने रामचरितमानस की शुरुआत में ही 'बन्दैवाणीविनायकौ' कहकर

*** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा–282005।**

वाणी और विचार दोनों को कविता के लिए जरूरी बताया है। कविता न तो सिर्फ शैली है, न ही विचार। विचार उसे शुष्क बना सकता है तो कला अर्थहीन। दोनों की साधना ही कवि को महत्वपूर्ण बनाती है। इसलिए कविता में धैर्य की बहुत जरूरत होती है। यह जितनी जरूरी कवि के लिए है उतनी ही पाठक के लिए भी।

शिल्प और अंतर्वस्तु के अंतरसंबंध को एक ही समय की दो कृतियों के माध्यम से समझा जा सकता है। रामचरितमानस और रामचंद्रिका दोनों का रचना काल एक है। दोनों कवि एक ही समय में लिख रहे थे। कहा जाता है कि तुलसीदास की उपेक्षा से दुखी होकर ही केशवदास ने एक ही रात में पूरी रामचंद्रिका लिख डाली थी। दोनों का विषय एक था। रामकथा। दोनों ने छंद का प्रयोग किया। दोनों की भाषा भी एक थी। परंतु क्या कारण है कि जो लोकप्रियता रामचरितमानस को मिली वह रामचंद्रिका को नहीं मिल सकी। रामचंद्रिका अपनी विद्वत्ता प्रदर्शित करने के उद्देश्य से लिखी गयी थी और रामचरितमानस अनुभूति से प्रेरित होकर। इसीलिए रामचरितमानस में सौम्यता और सहजता दिखाई देती है तो रामचंद्रिका में दुरूहता, टेढ़ापन। केशवदास ने छंद के बहुत सारे प्रयोग किए जो कविता के मूल स्वरूप को बिगाड़ कर रख दिया। एक तरफ रामचंद्रिका में 'मातु! कहाँ नृप तात? गए सुरलोकहि, क्यों? सुत शोक लिए' जैसी जटिल संवाद की पंक्ति तो दूसरी तरफ रामचरितमानस में 'सियाराम मय सब जग जानी, करहूँ प्रनाम जोरी जुग पाणि' जैसी असंख्य सीधी, सरल और गद्यात्मक पंक्तियाँ। भाषा की बुनियादी इकाई वाक्य ही है। कवि को भी यह छूट नहीं दी जा सकती कि वह वाक्य संरचना को तहस नहस कर दे। हालांकि उसे 'घी का लड्डू टेढ़ा भला' वाली छूट तो मिलती है। रामचंद्रिका को लोक में स्वीकृति नहीं मिल सकी। इसका मतलब यह हुआ कि सिर्फ छंद या कलात्मकता लोकप्रियता का कारण नहीं हो सकती। इसका मतलब यह भी हुआ कि अच्छी कविता का कोई संबंध सिर्फ छंद से नहीं है। छंद का मतलब छंद के शास्त्रीय कर्मकांड से। कोई भी कविता अपने होने की शर्तों को पूरा किए बिना कविता नहीं हो सकती। भगवत रावत का कथन है कि–"अगर कविता अपनी रचना होने की पूर्ण प्रक्रिया से गुजर कर आई है तो निरे गद्य दिखते रूप को भी अपने छंद में ढाल देती है। और यदि वह पूरी प्रक्रिया से नहीं गुजरी तो तथाकथित पारंपरिक छंद में होते हुये भी कविता नहीं होगी।"

जाने कहो कैसे प्रिय–आगमन वह
नायक ने चूमे कपोल
डोल उठी वल्लरी की लड़ी जैसे हिंडोल।
इस पर भी जागी नहीं
चूक–क्षमा माँगी नहीं
निद्रालस बंकिम विशाल नेत्र मूँदे रही..
किंवा मतवाली थी यौवन की मदिरा पिये
कौन कहे
निर्दय उस नायक ने
निपट निठुराई की
कि झोंकों की झड़ियों से
सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली
मसल दिये गोरे कपोल गोल
चौंक पड़ी युवती..
चकित चितवन निज चारों ओर फेर
हेर प्यारे को सेज–पास
नम्र मुख हँसी–खिली

खेल रंग, प्यारे संग।

आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास का आगाज रीतिकालीनता से छुटकारा पाने में चला गया। द्विवेदी युग खड़ी बोली के अपने छंद और रूप विन्यास खोजने में। छायावाद में खड़ी बोली कविता अपना सही रूप पा जाती है। और इसी समय कविता ने अपने बने बनाए रूप के केंचुल को छोड़कर अपना नया रूप प्राप्त कर लिया। निराला इसके अग्रदूत बने। निराला ने मुक्त छंद में कविता लिखकर छंद को ही उसकी जकड़न से मुक्त कर दिया। कविता ने अपने पारंपरिक रूप को छोडकर मुक्त छंद को अपना लिया। यह भी है की फिर भी बहुतेरे लोग छंद के दामन को छोड़े नहीं। आज भी हर शहर में ऐसे कवियों की कमी नहीं है जो छंद बद्ध कविता करते हैं। लेकिन गंभीर साहित्य के इतिहास में वे जगह नहीं बना पाए। स्थानीय लोकप्रियता और सरकारी पुरस्कारों में जरूर अपनी दखल रखी। साहित्य के पाठकों और आलोचकों ने उन्हें तवज्जो न दी। जिस छंद से मुक्ति की कामना के साथ निराला मुक्त छंद की पैरवी की वह अपनी जड़ता में अतिरेक की हद तक पहुँच गयी थी। आज समस्या यह बन गयी है की मुक्त छंद के नाम पर एक नए तरह का अतिवाद पनप गया है। छंद से मुक्ति को कवियों ने छंद का निषेध मान लिया। इसे शिल्प की निरर्थकता से जोड़ दिया गया। मानो शिल्प पर बात करना पिछड़ापन हो। जरूरी है इसे समझने की। निराला हों या छायावाद के अन्य कवि सबने छंद का दामन पकड़े रखा। इसीलिए कहा जाता है कि निराला ने छंद मुक्त नहीं बल्कि मुक्त छंद की बात की थी। निराला की बहुत सारी कविताएं छंद का उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत करती हैं। राम की शक्तिपूजा जैसी कविताओं को छोड़ भी दें तो अनेक ऐसी कविताएं हैं जो ऊपर से पता ही नहीं चलेगा कि उसमें कौन सा छंद है। बांधो न नांव इस ठाँव बंधुध पूछेगा सारा गाँव बंधु। किसका ध्यान इस तरफ जाता है कि यह चौपाई छंद है या नागार्जुन की कवितादृ'जले ठूंठ पर बैठकर गयी कोकिला कूक, बाल न बाका कर सकी शासन की बंदूक' पारंपरिक दोहा छंद है। छायावाद के बाद के समय में नागार्जुन, त्रिलोचन और केदारनाथ अग्रवाल ने भी कविता में लय, ताल और छंद का दामन नहीं छोड़ा। कविता का स्वाभाविक छंद उसको और संप्रेषणीय और आत्मीय बना देता है। नागार्जुन की अनेक कविताओं में छंद मिलेगा, त्रिलोचन ने तो अपनी कविताओं के लिए हिन्दी में नए तरह के छंद का विधान किया।

शब्दों के द्वारा जीवित अर्थों की धारा
मैंने आज बहा दी है जिसके दो तट हैं
एक भाव का एक रूप का। निकट–निकट हैं
चाहे दूर–दूर दिखते हों। जो भी हारा–थका
यहाँ पहुँचेगा वह तन–मन में न्यारा
तेज–ओज पाएगा, लक्ष्ण सभी प्रकट हैं
हुलसी हरियाली से उपचित है, उद्भट हैं
वचन प्राण का परितोषण करते हैं सारा।

इसके बाद वे सारे कवि जिनके बल पर आधुनिक हिन्दी कविता की इमारत टिकी है उन सभी ने छंद के पारंपरिक शास्त्रीय स्वरूप को भले ही स्वीकार न किया हो लेकिन कविता में उसके प्रयोग और अभ्यास को कभी नहीं छोड़ा चाहे वह अज्ञेय हों या अन्य। यहाँ तक की मुक्तिबोध की कविताओं में भी लय, तुक दिखाई देता है– उदरम भारि अनात्म बन गएध भूतों की शादी में कनात से तन गएध लिया बहुत–बहुत ज्यादा दिया बहुत बहुत कमध मर गया देशध जीवित रह गए तुम'। यहाँ तक कि रघुवीर सहाय जिन्हें अखबारी भाषा का कवि कहा गया उनकी कविताओं में भी यह छंद विधान मिल जाएगा– पढ़िये गीता बनिए सीता– जैसी कविता देखि जा सकती है।। ये वे कवि थे जिन्होंने व्युत्पत्ति और अभ्यास को त्याज्य नहीं माना।

रघुवीर जी कुछ ऐसी ही जिज्ञासाओं के साथ अपनी श्लोग भूल गए हैं शीर्षक कविता में कहते हैं। हम उपन्यास में बात मानव की करेंगे और कभी बता नहीं पाएँगे सूखी टाँगें घसीटकर खम्भे के पास बैठे हुए लड़के के सामने पड़े हुए तसले का अर्थ हम लिखते हैं कि उसकी स्मृतियों में फिलहाल एक चीख़ और गिड़गिड़ाहट की हिंसा है उसकी आँखों में कल की छीनाझपटी और भागमभाग का पैबन्द इतिहास उसके भीतर शब्दरहित भय और जख्मी आग है यह तो हम लिखते हैं पर उस व्यक्ति में हैं जो शब्द वे हम जानते नहीं जो शब्द हम जानते हैंए उसकी अभिव्यक्ति नहीं विज्ञापन हमारा है। आज जब कविता इन्सानी सरोकारों को स्पर्श नहीं कर पा रही है और अन्याय के खिलाफ तनकर खड़ी नहीं हो पा रही है तब उनकी आज की कविता शीर्षक रचना की ये पंक्तियाँ बड़ी समीचीन लगती हैं . आतंक कहाँ जा छिपा भागकर जीवन से जो कविता की पीड़ा में अब दिख नहीं रहा हत्यारों के क्या लेखक साझीदार हुए जो कविता हम सबको लाचार बनाती है यह कवियों के हत्यारों के साथ मिल जाने की जो आशंका है वह समाज को लाचार बना देती है। समाज की यह लाचारी ही हमें जड़ बना देती है। आज इतना सारा लिखा जा रहा है। इतने सारे लोग लिख रहे हैं। लेकिन समाज रत्ती भर भी नहीं बदलता। यह क्या है क्या कविता मर चुकी है या क्या यह समाज ही मर चुका है इसलिए कविता निष्प्रभाव हो गई है इसी ऊहापोह को व्यक्त करती रघुवीर जी की आज का पाठ है कविता की ये पंक्तियाँ देखिए . जब एक महान संकट से गुजर रहे हों पढ़े.लिखे जीवित लोग एक अधमरी अपढ़ जाति के संकट को दिशा देते हुए तब आप समझ सकते हैं कि एक मरे हुए आदमी को मसखरी कितनी पसन्द है। यह बखूबी बयान करता है उस परिदृश्य को जो आज कविता के मंच को घेरे हुए है। आज हास.परिहास से बाहर निकलकर संजीदा बातें करने वाला कवि कविता के मंच से निष्कासित है।

नामवर सिंह ने उसी समय कविता लिखना प्रारम्भ किया था। छंद के प्रयोग मे अपने समकलीनों से दो कदम आगे थे। उनकी एक अद्‌भुत कविता फागुनी शाम है जो लिखी तो मुक्त छंद में है लेकिन वह कवित्त के रूप में भी पढ़ी जा सकती है।

"फागुनी शाम अंगूरी उजास
बतास में जंगली गंध का डूबना
ऐंठती पीर में
दूर, बराह–से
जंगलों के सुनसान का कुंथना ।
बेघर बेपरवाह
दो राहियों का
नत शीश
न देखना, न पूछना ।
शाल की पँक्तियों वाली
निचाट–सी राह में
घूमना घूमना घूमना"

इसे इस तरह भी पढ़ा जा सकता है–

"फागुनी शाम अंगूरी उजास,बतास में जंगली गंध का डूबना
ऐंठती पीर में दूर बराह से, जंगलों के सुनसान का कूँथना।
बेघर बेपरवाह दो राहियों का, नत शीश न देखना, न पूछना।
शाल की पंक्तियों वाली निचाट सी राह में, घूमना घूमना घूमना।"

उसी के आसपास केदारनाथ सिंह जो कविता लिखने के शुरुआती दौर में थे– झड़ने लगे नीम के पत्तेः बढ़ने लगी उदासी मन की' जैसी पंक्तियाँ लिख रहे थे। समकालीन कविता

शिल्प और भाषा के स्तर पर लगातार पिछड़ती गयी। पुरानी पीढ़ी के बाद कविता का स्वरूप बिगड़ता गया। वह अपनी पहचान खोती गयी। उसपर आरोप लगाए जाने लगे कि उसमें अब पहले जैसी संप्रेषणीयता नहीं रही जो कविता के लिए जरूरी थी। पाठक की आत्मीयता आज कविता के साथ नहीं बन पाती है। वह दौर जिसे आज लॉंग नाइनटीज के नाम से जाना जा रहा है उसमें पाठक का कविता के साथ रिश्ता पूरी तरह से टूट गया। कथ्य के स्तर पर दुरूहता और शिल्प का अभाव दोनों ने उसे पाठक से दूर कर दिया। वह बेहद नीरस बन गयी। पढ़ने में सांस फूल जाती है। दो चार पंक्तियों के बाद पूरी कविता पढ़ने का धैर्य नहीं रह जाता है। इसीलिए आज यह बार बार सवाल पूछा जाता है कि कविता पढ़ता कौन है। और यह सही भी है। यह शिल्प की निरर्थकता सिद्ध करने की वजह से ही है।

आज कविता के स्वाभाविक बॉडी लैंग्वेज को तहस नहस कर दिया गया है। और यह सिर्फ कविता ही नहीं इसमें आलोचना की भी बड़ी भूमिका है। व्यावहारिक आलोचना में अब बस व्यवहार बनाने की बात रह गयी है। बनारस में एक मित्र कहा करते थे कि हिन्दी की व्यावहारिक आलोचना वैसी ही है कि ठीक से आलोचना कर दीजिये तो व्यवहार बिगड़ जाएगा। आलोचना ने कविता के आवश्यक तत्वों से अपने को दूर कर लिया है। हर कविता का अपना रूप होता है और उसी से उसके कवि की भी पहचान निर्मित होती है। आज के कवि ऐसी पहचान निर्मित करने में असफल हैं। इसीलिए समकालीन कविता पर यह आरोप लगाया जाता है कि ये सभी कवितायें एक ही बड़ी कविता के अंश हैं। क्योंकि उनमें एकरूपता है। शास्त्र में जड़ता होती है लेकिन उस जड़ता को तोड़ने के लिए यदि हम नयी तरह की जड़ता पैदा कर दें तो यह भी कोई अच्छी बात नहीं होगी। आज अधिकांश कवि बिना पूर्व तैयारी के काव्य क्षेत्र में उतर गए हैं। उनके पास नयापन के नाम पर सिर्फ भाषा बची है। जिसे तोड़ मरोड़ कर नयापन लाने की असफल कोशिश करते रहते हैं। इसके लिए आलोचना को अपनी जिम्मेदारी निभानी होगी। कविता और गैर कविता के बीच के फर्क को बतलाना होगा। रामचन्द्र शुक्ल जब कह रहे थे कि 'सभ्यता के आवरण के साथ साथ कवि कर्म कठिन होता जाएगा' तो वे कविता के रूप और वस्तु दोनों के बारे में कह रहे थे। इसीलिए रीतिकाल के एक कवि ने अपने दौर के कवियों के बारे में कहा था जो आज भी थोड़े बहुत हेर फेर के साथ कहा जा सकता है–डेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच, कवित्त बनावन खेल करि जानो है'।

संदर्भ–सूची :–

1. कविता के नए प्रतिमान, नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, इलाहाबाद, चौथा संस्करण, 1990।
2. पल्लव, सुमित्रानन्दन पंत, राजकमल प्रकाशन, इलाहाबाद, नवां संस्करण, 1993।
3. काव्य कला अन्य निबंध, जयशंकर प्रसाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण 2016।

भारत में समावेशी-शैक्षणिक-विकास : नीतियाँ एवं कार्यान्वयन

सुधीर कुमार तिवारी *
डॉ. सुहासिनी बाजपेयी **

समावेशी शिक्षा, अपने व्यापक अर्थों में, शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं की विविधता को स्वीकार करने और उचित समर्थन प्रदान करने से संबंधित है, जिसकी प्राथमिक आवश्यकता है कि शिक्षक को कक्षा में विशिष्ट विद्यार्थियों की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम होना चाहिए। इस प्रकार समावेशी शिक्षा की सफलता एवं गुणवत्ता शिक्षक के प्रशिक्षण पर निर्भर करती है। एक समावेशी कक्षा–कक्ष में पढ़ाने के लिए शिक्षक के पास ऐसे कौशल और ज्ञान की आवश्यकता होती है जो उसे नियमित रूप से कक्षा तक व्यापक पहुँच प्रदान करने वाली रणनीतियों की योजना बनाने और उन्हें लागू करने में मदद करें (नागपाल आर. – संगीता 2016)। समावेशन की इस अवधारणा को कक्षा स्तर से ही आत्मसात कराया जाना चाहिए। समावेशन मूल रूप से विविधताओं की स्वीकृति का एक सकारात्मक दृष्टिकोण है जो शिक्षक के सकारात्मक दृष्टिकोण एवं समर्पण के साथ शुरू होता है। इसलिए सभी शिक्षकों को विशेष कौशलों से युक्त करने, सामान्य पाठ्यक्रम बनाने, प्रभावी शिक्षण विधियों के लिए हस्तक्षेप करने की तत्काल आवश्यकता है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि इस तरह के हस्तक्षेप से सभी विद्यार्थियों के अधिगम में सुधार हो सके। विकलांग बच्चों का उनके लिए संचालित विभिन्न कार्यक्रमों एवं उनके अध्यापकों के प्रति विकलांग बच्चों का दृष्टिकोण के परिणामों में 70 प्रतिशत से अधिक विकलांग बच्चे ने अपने लिए संचालित कार्यक्रमों में अपने अध्यापक के व्यवहार के प्रति संतुष्ट हैं एवं उनका दृ ष्टिकोण सकारात्मक पाया गया (त्रिपाठी, वी. एन. और अमन, ए. के. 2012)।

भारत सरकार ने पहली बार 2001 की जनगणना में विकलांगों को आकड़े के रूप में सम्मिलित किया। वर्ष 2001 से 2011 के मध्य विकलांगों कि संख्या 22.4 प्रतिशत बढ़ गई। जहाँ 2001 में 2.19 करोड़ विकलांग थे वहीं वर्ष 2011 में 2.68 करोड़ हो गए, जिसमें 1.5 करोड़ पुरुष एवं 1.18 करोड़ महिलाएं हैं (राव, ई. 2016)। भारत में भारतीय संविधान के कई अनुच्छेदों में समावेशी समाज की संकल्पना हेतु अनेक प्रावधान वर्णित हैं। जैसे अनुच्छेद 14 में समान कानून, अनुच्छेद 15 में भेदभाव रहित वातावरण, अनुच्छेद 41 में कार्य की स्वतंत्रता एवं अनुच्छेद 45 में राज्य सभी बालकों का 6 वर्ष तक देखभाल एवं शिक्षा प्रदान करेगा और अनुच्छेद 21 (क) के अनुसार 6 से 14 वर्ष तक सभी बालकों को निःशुक्ल एवं अनिवर्य शिक्षा का प्रावधान है (यादव ए. 2020)। फिर भी विशिष्ट बालकों के प्रति समाज के साथ–साथ सरकार द्वारा भी उपेक्षा की गई है। विशिष्ट बालकों को मुख्यधारा में शामिल करना अभी के लिए एक दूर का सपना है, क्योंकि वर्तमान समय की नीतियाँ समायिक परिदृश्य में किसी भी वास्तविक परिवर्तन को प्रभावित करने के लिए अपर्याप्त हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, देश में 2.21 प्रतिशत दिव्यांगजन हैं और इसमें से अधिकतर ग्रामीण इलाकों से हैं। शिक्षा, कौशल विकास और आधारभूत ढांचे तक

* पीएच–डी. शोधार्थी, शिक्षा संकाय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र।
** सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र।

दिव्यांगजनों तक पहुंच कम होने के कारण उनके सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र से बाहर हो जाने का खतरा बना रहता है (सिंह, जे. 2017)।

विशिष्ट विद्यार्थियों के लिए शैक्षणिक योजनाएं एवं नीतियाँ : केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया। रिपोर्ट में कहा गया कि विकलांग व्यक्तियों की शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति का महत्वपूर्ण भाग है। इन लोगों को तभी विशिष्ट विद्यालय भेजा जाना चाहिए, जब विद्यालय उनके अनुकूल हों। शारीरिक रूप से विकलांग एवं मानसिक मंदबुद्धि बालकों की शिक्षा के संबंध में दो उद्देश्य निश्चित किए गए– उनके अंदर आत्मविश्वास उत्पन्न करना और उन्हें आत्मनिर्भर बनाना (सार्जेंट प्रतिवेदन 1944)। स्वतंत्र भारत का प्रथम शिक्षा आयोग (1966) ने इस बात पर बल दिया कि विकलांग विद्यार्थियों की शिक्षा, शिक्षा नीति का अभिन्न अंग है। यह पहला वैधानिक निकाय था जिसने यह सुझाव दिया कि दिव्यांग बच्चों की शिक्षा का आयोजन केवल मानवीय दया भावना के आधार पर नहीं बल्कि एकता तथा समावेशी आधार पर किया जाना चाहिए। भारतीय शिक्षा आयोग (1964–66) ने भी नियमित विद्यालयों में विशिष्ट आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए शिक्षा की सिफारिश की थी। भारतीय शिक्षा आयोग ने नियमित विद्यालयों में विशिष्ट आवश्यकता वाले विद्यार्थियों (शारीरिक रूप से विकलांग एवं मानसिक मंदबुद्धि बालकों) के लिए शिक्षा के संबंध में सुझाव देता है। ऐसे में आवश्यक है कि विशिष्ट बालकों की शिक्षा सामान्य शिक्षा प्रणाली का एक मुख्य अंग हो, जिसके परिणाम–स्वरूप सभी बालकों का समान सामाजिक विकास हेतु एकीकृत कार्यक्रमों के साथ प्रयोग की आवश्यकता है। आयोग ने शारीरिक एवं मंदबुद्धि बालकों के लिए अलग से विद्यालय खोलने का भी सुझाव दिया है। जिसके लिए प्रत्येक जिले में इन बालकों की शिक्षा हेतु कम–से–कम एक विद्यालय अवश्य होना चाहिए। विशिष्ट बालकों के शिक्षण हेतु उन्नत देशों में विकसित नई विधियों और प्रौद्योगिकियों को सीखा और अपनाया जा सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति शिक्षा के सभी स्तरों में गुणात्मक सुधार हेतु आयोग ने 24 जुलाई 1968 में धोषणा की कि निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा– 5 वर्षों के अंदर 6–11 आयु के सभी बालकों को निम्न प्राथमिक एवं अगले 5 वर्षों में 11–14 आयु के सभी बालकों को उच्च प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क प्रदान किया जाएगा। शैक्षिक अवसर में समानता के लिए– शारीरिक रूप से विकलांग एवं मानसिक दृष्टि से पिछड़े बालकों के लिए अलग से विद्यालय स्थापित किए जाएंगे (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968)।

सर्वप्रथम राष्ट्रीय विकास के रूप में 'सभी के लिए शिक्षा' को केंद्रीय लक्ष्य के रूप में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने निर्धारित किया। समान शैक्षिक अवसर सुनिश्चित करने के लिए प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिक किया गया। इस लक्ष्य की प्राप्ति में प्रथम कठिनाई विकलांग बालकों का विद्यालय में नामांकन न हो पाना तथा विद्यालय से ड्रॉप–आउट की समस्या है, जिसके लिए निम्नलिखित उपाय प्रस्तुत दिए गए जैसे–सामान्य एवं शारीरिक विकलांग बालकों को सामान्य बालकों के साथ शिक्षा प्रदान की जाएगी, गंभीर विकलांग बच्चों के लिए छात्रावास वाले विशेष स्कूल की व्यवस्था की जाएगी, विकलांग बालकों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी, अध्यापकों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विकास किया जाएगा एवं विकलांगों की शिक्षा के लिए स्वैच्छिक प्रयास को हर संभव तरीके से प्रोत्साहित किया जाएगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्गत विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु पर्याप्त साधन प्रदान नहीं किया गया इसका प्रमुख कारण शिक्षा हेतु संसाधनों तथा प्रशिक्षकों की कमी का होना था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शैक्षिक अवसरों की समानता के संदर्भ में विकलांग बच्चों की शिक्षा व्यवस्था पर बल दिया गया और उनकी कार्य योजना (The Plan of Action] 1887) में यह घोषणा की गई।

भारतीय पुनर्वास परिषद (Rehabilitation Council of India–1992)– अंतरराष्ट्रीय विकलांगता दिवस (1981) के उपरांत भारत सरकार का ध्यान दिव्यनों के पुनर्वास की ओर गया। भारत सरकार ने 1986 में भारतीय पुनर्वास परिषद् को एक सोसायटी के रूप में पंजीकृत किया जिसके मुख्य 4 उत्तरदायित्व थे–

1. विकलांगों के कल्याण हेतु नीतियाँ एवं कार्यक्रमों की रूप–रेखा बनाना।
2. विकलांगों को पढ़ाने वाले व्यक्तियों के लिए पाठ्यक्रम एवं तकनीकियों का मानकीकरण करना।
3. विकलांगों के शिक्षा एवं पुनर्वास संबंधी प्रशिक्षण चलाने वाली संस्थाओं को मान्यता प्रदान करना।
4. पुनर्वास कार्य में लगे व्यक्तियों को केन्द्रीय पंजीकरण रजिस्टर में अंकित करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सितंबर 1992 में भारतीय पुनर्वास परिषद् (Rehabilitation Council of India) अधिनियम को संसद द्वारा पारित किया गया और 22 जून, 1993 को इस अधिनियम को कानूनी रूप में स्वीकार कर लिया गया। भारतीय पुनर्वास परिषद् (नई दिल्ली) की स्थापना के साथ विशिष्ट बालकों को पुनः समाज की मुख्य धारा से जोड़ने की बात को चरितार्थ करने का प्रयास किया गया। संसोधित भारतीय पुनर्वास परिषद (Rehabilitation Council of Indi– 2000) संसद द्वारा वर्ष 2000 में इस अधिनियम को और अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से विशेष शिक्षा में अनुसंधान में बढ़ावा देने के लिए कुछ अतिरिक्त जिम्मेदार्री दी गयी जो इस प्रकार हैं–

1. विकलांगों के लिए पुनर्वास संबंधी नीतियों एवं कार्यक्रमों का संचालन करना।
2. पूरे देश में सभी प्रशिक्षण संस्थानों में एक रूपता लाने के लिए मानकों को विनियमित करना।
3. शिक्षण–प्रशिक्षण के न्यूनतम मानक निर्धारित करना।
4. विकलांगता पुनर्वास क्षेत्र में पाठ्यक्रम चलाने वाले संस्थानों/संगठनों/विश्वविद्यालयों को मान्यता प्रदान करना।
5. पुनर्वास क्षेत्र एवं विशेष शिक्षा में अनुसंधान को बढ़ावा देना।
6. पुनर्वास संबंधी शैक्षिक योग्यता रखने वाले व्यक्तियों का पंजीकरण करना।

विकलांगता केवल जन्मजात ही नहीं वरन् औद्योगिक दुर्घटनाएं, युद्ध, प्राकृतिक त्रासदी के परिणाम स्वरूप भी हो सकती है। आकड़ों का हिसाब लगाएं तो प्राकृतिक विकलांगता की तुलना में ये मानव निर्मित विकलांगता ज्यादा चिंता का कारण है। यदि आकड़ों पर विश्वास करें तो जन्मजात विकलांगता की तुलना में जन्मोपरांत मानव निर्मित विकलांगता की संख्या दो गुनी से ज्यादा है (अरुण, एन. 2013)। भारत में, ऐसे विकलांग व्यक्तियों की कुल संख्या का पता लगाना बहुत मुश्किल है क्योंकि एकीकृत और आमतौर पर स्वीकृत परिभाषा और विकलांगता की समझ के अभाव के कारण अनुमान भिन्न होते हैं। जिससे विशेष जरूरतों वाले विद्यार्थियों की पहचान करने में अलग–अलग और गलत अनुमान लगते हैं। अलग–अलग आंकड़ों में विकलांगता को पहचानने के अपने मानक होते हैं, जिससे आंकड़ों में बड़ी विसंगति पैदा होती है। शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन और सशक्तिकरण का सबसे प्रबल साधन माना जाता है। हालांकि समावेशी शिक्षा के महत्व को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है, फिर भी समावेशी शिक्षा में कई समस्याएं हैं, जो बड़े और विविध पैमाने पर समावेशी शिक्षा के कार्यान्वयन को रोक रहे हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव समावेशी शिक्षा के लोकाचार के विरोधाभासी है। आंतरिक बाधाएं ज्यादातर

आत्मविश्वास के साथ मनोवैज्ञानिक होती हैं। विशिष्ट बालकों के लिए बुनियादी ढांचे की कमी और विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी के परिणाम स्वरूप समस्याएँ विद्यमान हैं (शाह जे. ए. पी. 2014)। परिणाम बताते हैं कि समावेशी शिक्षा के लिए अभी भी एक लंबा रास्ता तय करना है। हम कह सकते हैं कि समावेशी शिक्षा तभी संभव है जब सभी बुनियादी ढांचे और सुविधाओं जैसे विद्यालयों के लिए धन, शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण प्रदान करने और विद्यार्थियों के लिए पाठ्यक्रम अनुकूलन समर्थन प्रणाली प्रदान की जाए। जिससे ज्ञात होता है कि विशिष्ट विद्यार्थियों (दिव्यांग) के लिए आवश्यक बुनियादी सुविधाओं का अभाव है (खरलुखी बी. 2016)।

अधिकांश शिक्षक विशिष्ट विद्यार्थियों की श्रेणियों के बारे में जानते थे। इससे संकेत मिलता है कि शिक्षकों को विशिष्ट विद्यार्थियों के मध्य विद्यमान विविधता का बोध है। अध्ययनरत शिक्षकों की धारणाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि दिल्ली के स्कूल विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों को दाखिला देने के लिए खुद को तैयार करने के लिए तैयार कर रहे हैं, बुनियादी सुविधाओं को प्रदान कर रहे हैं जो कुछ हद तक समावेशी हैं और प्रत्येक विद्यालय में एक विशेष शिक्षक का प्रावधान है फिर भी विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों के बीच मौजूद विविधता का प्रतिनिधि नहीं है। विभिन्न शिक्षण सहायक सामाग्री अभी भी शिक्षकों कि पहुँच से दूर है। विद्यालयों में एक सहयोगी तंत्र के निर्माण की आवश्यकता है, जहाँ शिक्षक, अभिभावक, विशेष शिक्षक और अन्य संबंधित विद्यालयकर्मी, विशिष्ट आवश्यकत वाले विद्यार्थियों के लिए विद्यालय स्तर पर लाभकारी कार्य कर सकते हैं (शर्मा वाई. 2018)। प्रत्येक बच्चा विशिष्ट है। यह प्रत्येक नागरिक की जिम्मेदारी है कि वह विद्यार्थियों को उनकी क्षमता का एहसास कराने में उनकी मदद करें और उन्हें इस देश के नागरिकों के लिए योगदान दें। सर्वशिक्षा अभियान द्वारा विशिष्ट विद्यार्थियों (CWSN) तक पहुँचने के लिए न केवल रैंप, व्हीलचेयर, चश्मा, श्रवण यंत्र इत्यादि प्रदान करने, बल्कि गंभीर विकलांग लोगों को घर पर आधारित शिक्षा प्रदान करने पर भी विशेष जोर दिया गया है। यह लेख पंजाब के दो जिलों में सर्वशिक्षा अभियान और अंबाला कैंट के एक निजी स्कूल में हितधारकों के प्रयासों पर प्रकाश डालता है। हरियाणा, जहां कई शारीरिक चुनौतियों वाले विद्यार्थियों का जीवन अपने शिक्षकों, माता–पिता और साथियों के समर्थन से बदल गया है (किरण डी. 2008) ।

समेकित शिक्षा के अंतर्गत अध्ययनरत सामान्य विद्यालय एवं विशिष्ट विद्यालयों के विशिष्ट विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं सामाजिक समायोजन में अंतर नहीं है, अतः अभिभावकों एवं शिक्षकों को विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों पर विशेष ध्यान देकर उनके विकास में समुचित अवसर देना चाहिए (केवट, आर.एन 2009)। वर्तमान विद्यालयों में अध्यापन करने वाले शिक्षकों को शिक्षण के अतिरिक्त अन्य शिक्षणेतर कार्य करने पड़ते हैं, जिनका सीधा असर समावेशी शिक्षा की गुणवत्ता पर पड़ता है। कक्षा में शिक्षक–छात्रा अनुपात के मानकों का ध्यान नहीं रखा जाता है, परिणामस्वरूप शिक्षक दिव्यांग विद्यार्थियों पर अतिरिक्त ध्यान नहीं दे पाते हैं। विद्यालयों में प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी तथा कार्यरत सामान्य शिक्षकों को समावेशी शिक्षा से सम्बंधित पर्याप्त प्रशिक्षण न मिलने के कारण भी गुणवत्तापूर्ण समावेशी शिक्षा पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है (चौधरी 2010)। भारती, ने विद्यालयों के विद्यार्थियों, शिक्षकों और प्रशासनिक अधिकारियों जैसे सभी स्तरों पर समावेशी विद्यालयों में सहयोग की संभावनाओं की पड़ताल एवं सहयोग को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न रणनीतियों पर प्रकाश डालते हुए बताया कि सर्व शिक्षा अभियान (SSA) और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (RMSA) के तहत राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा समावेशी शिक्षा पद्धतियों के कार्यान्वयन और दिव्यांग विद्यार्थियों को नियमित शैक्षिक हस्तक्षेप प्रदान करने

के लिए आस–पास के नियमित विद्यालयों में शुरू की गई, जिसका उद्देश्य विशिष्ट विद्यार्थियों के प्रति नियमित शिक्षकों को संवेदनशील बनाना और उन्हें विशिष्ट शिक्षक की मदद से सक्षम बनाना है (भारती 2014)।

भारत में शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 के क्रियान्वयन से सुगमता से बदलते शिक्षा परिदृश्य ने भारतीय कक्षा को छात्रों की जरूरतों के मामले में अधिक विविध बना दिया है। अधिक से अधिक कक्षाओं में अब विशिष्ट विद्यार्थियों की उपस्थिति देखी जा रही है। सर्व शिक्षा अभियान (SSA) के तहत प्रयासों के परिणामस्वरूप कक्षा में मौजूदा विविधता को जोड़कर प्राथमिक स्तर तक विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों का नामांकन और प्रतिधारण भी बढ़ गया है। एक ही कक्षा में अपने गैर–विकलांग साथियों के साथ विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों के शिक्षण–शिक्षण का प्रबंधन नियमित शिक्षकों के लिए कई कारणों से एक चुनौती बन रहा है। उनमें सबसे महत्वपूर्ण समावेशी शिक्षा पद्धतियों में प्रशिक्षण की कमी है। इसे एक चुनौती के रूप में साकार करते हुए भारत सरकार की विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों जैसे कि सर्वशिक्षा अभियान (SSA) और राष्ट्रीय शिक्षा अभियान (RMSA) ने बड़ी संख्या में अध्यापनरत शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करके इस चुनौती को पूरा करने का प्रयास किया है।

दिल्ली के प्राथमिक तथा माध्यमिक विद्यालय के नियमित शिक्षकों में से लगभग 70 प्रतिशत शिक्षको ने न तो किसी भी प्रकार की विशेष शिक्षा में प्रशिक्षण प्राप्त किया है और न ही उन्हें दिव्यांग विद्यार्थियों को पढ़ाने का कोई अनुभव है। इसके अलावा लगभग 87 प्रतिशत शिक्षक अपनी कक्षाओं में दिव्यांग विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए किसी भी प्रकार की उपकरणों का उपयोग नहीं करते उन्होंने कहा कि इस गंभीर समस्या के निराकरण के लिए सरकार को अधिक से अधिक शिक्षकों के लिए विशिष्ट शिक्षा संबंधी प्रशिक्षण का प्रबंध करना चाहिए और साथ ही विद्यालयों को शैक्षिक उपकरण उपलब्ध करवाने चाहिए, जिससे शिक्षक कक्षाओं में अधिगम वातावरण स्थापित कर सकें (दास, क्योनि तथा देसाई 2013)। आजादी के 70 वर्ष बाद भी हमारे सामने अनेक ऐसी समस्याएँ यथा– अपर्याप्त प्रशिक्षित शिक्षक, विद्यालयों का भौतिक स्वरूप, समुदाय का पर्याप्त सहयोग न मिलना आदि हैं, जो समावेशी शिक्षा को विद्यालयी परिस्थितियों में अपनाने में बाधक सिद्ध होती हैं (राज, एल. 2018)। समावेशी शिक्षा सामाजिक समानता के साथ–साथ हर बालक को उसकी अपनी क्षमता विकसित करने में मदद करती है, जो असमर्थ बालक को जीवन की चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाता है। इस शिक्षा व्यवस्था से सामाजिक समानता के साथ–साथ हर बालक को उसकी अपनी क्षमता विकसित करने में मदद मिलती है। समावेशी शिक्षा में सभी विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास ही शिक्षक की व्यवसायिक सफलता का मापदंड है लेकिन इसमें शिक्षक की कुछ अतिरिक्त जिम्मेदारियाँ एवं उत्तरदायित्व भी जरूर बढ़ जाती हैं (वर्मा ए. के. 2014)।

दिव्यांगों का शैक्षिक रूप से जागरूक न हो पाने, अपने अधिकारों को न जानने और उन्नति के पथ पर आगे न बढ़ पाने का एक मुख्य कारण सूचना का अभाव है। सूचना के अभाव और एक स्थान पर सूचनाएं एकत्र न हो पाने के कारण अक्सर निःशक्तजन अपने लिए उपलब्ध फायदों और स्कीमों से अनभिज्ञ रहते हैं (लिमये, एस. 2017)। अगर दिव्यांगों को उनकी आवश्यकतानुसार शिक्षा उपलब्ध करायी जाए तो वे पराश्रित न होकर दूसरों के लिए प्रेरणात्मक आदर्श बन सकते हैं क्योंकि अधिकतर दिव्यांग ही सक्षम लोगों को यह सिखाते हैं कि जब जीवन में चुनौती आए तो खुद उन चुनौती को स्वीकार करो (रघुरामन, एन. 2016)। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा का उद्देश्य मात्र संज्ञानात्मक ज्ञान तक सीमित न होकर उसे व्यवहरिकता के धरातल पर

लाने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे सभी बालकों का संज्ञानात्मक ज्ञान के साथ–साथ समाजिक ज्ञान का भी विकास हो जो उनके सर्वांगीण विकास एवं उनकी क्षमताओं के संवर्धन में सहायक सिद्ध हो रहा है। इस प्रकार समावेशी शिक्षा के द्वारा समाज में विशिष्ट बालकों के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन देखने को मिल रहा है, जो भारत सरकार की नीतियों एवं योजनाओं का प्रतिफल है।

संदर्भ–ग्रंथ :–

1. अरुण, एन. (2013), विकलांगता की चुनौतियां, योजना, अप्रैल, 57(04), नई दिल्ली, पृ० सं० 33।
2. किरण, डी. (2008). मेकिंग इंक्लूसिव एडुयाक्यिओन ए रिएलिटी रू इट इज नॉट जस्ट फॉर्मिलिटी, द प्राइमरी टीचर, 33(1–2)।
3. कोठारी आयोग (1964–66). http://www-bpaindia-org/pdf/VIB Chapter&VIII-pdf
4. खरलुखी, बी. (2016). ए स्टडी ऑन इम्प्लीमेंटेशन ऑफ इंक्लूसिव एजुकेशन एट द एलिमेंट्री लेवल इन द सलेक्टेड नार्थ–ईस्टर्न स्टेट्स. इंडियन एजुकेशनल रिव्यू, 54(2), 98–103।
5. चौधरी, आर. (2010). दी टीचिंग–लर्निंग कंडिशन्स फॉर क्वालिटी एजुकेशन इन इंक्लूसिव स्कूल्स, जर्नल ऑफ इंडियन एजुकेशन. 36(1), 76–83।
6. दास, ए. के., क्योनि, ए. बी. और देसाई, आई. पी. (2013). इंक्लूसिव एजुकेशन इन इंडियारू आर द टीचर प्रिपेयर्ड?, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ स्पेशल एजुकेशन, 28(1), 27–36।
7. नई शिक्षा नीति https://education-gov-in/sites/upload_files/mhrd/files/upload_document/npe-pdf.
8. नागपाल, आर. और संगीता (2016). इंक्लूजन इन एजुकेशन रू रोल ऑफ टीचर्स, जर्नल ऑफ इंडियन एजुकेशन, 38(1)।
9. भारती (2014). कोलाब्रेशन इन इंक्लूसिव एडुकेशन, द प्राइमरी टीचर, 34(3)।
10- भारतीय पुनर्वास परिषद (1992). आर.सी.आई एक्ट http://www-rehabcouncil-nic-in/writeread data/rciact-pdf.
11. यादव ए. (2020). भारत में समावेशी शिक्षा की अवधारणा एवं विकास क्रम : विभिन्न नीतियों , दस्तावेजों एवं अधिनियमों के आईने में, वाइस ऑफ टीचर्स एंड टीचर एजुकेटर्स, 9(1), 90–96।
12. रघुरामन, एन. (2016) रू दैनिक भास्कर, 27 दिसम्बर, नागपुर।
13. राज, एल. (2018). इंक्लूसिव एजुकेशन इन इंडिया : चौलेन्जिज एंड प्रोस्पेक्टस, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इनोवेटिव रिसर्च इन इंजीनियरिंग एंड मल्टीडिसप्लीनरी फिजिकल साइंसेज, 6 (5), 38–42।
14. लिमये, एस. (2017), निशक्तजनों क सशक्तिकरण, योजना, जुलाई, 61 (07), पृ० सं० 26.
15. वर्मा, ए. के. (2014). समावेशी शिक्षा, भारतीय आधुनिक शिक्षा, 35(2)।
16. शर्मा, वाई. (2018). हाऊ डिस्टेंट इज इंक्लूशन? ए स्टडी ऑफ दिल्ली स्कूल टीचर्स, इंडियन एजुकेशनल रिव्यू, 56(2)।
17. शाह, जे. ए. पी. (2014). राइट टू एडुकेशन ऑफ द डिसएबल्ड, जर्नल ऑफ इंडियन एजुकेशन, 40(3)।
18. सिंह, जे. (2017), पहल को समर्थन की प्रतिबद्धता, योजना, नई दिल्ली, जुलाई, 61(07), पृ० सं० 72।
19. त्रिपाठी, वी. एन. और अमन, ए. के. (2012). सर्व शिक्षा अभियान के तहत नियुक्त विशेष अध्यापकों का विकलांग बालकों की शिक्षा में योगदान, परिप्रेक्ष्य, 19(2). पृ.सं. 35–48।

नज़ीर अकबराबादी की कविता में हिंदुस्तानी तहजीब

डॉ. ज्ञानेंद्र कुमार*

सब किताबों के खुल गए मानी
जन से देखी 'नजीर' दिल की किताब

नज़ीर अकबरबादी का जन्म 1753 ई0 में दिल्ली में हुआ। उनका नाम वली मुहम्मद रख गया। वे अपने माता–पिता के बारह संतान में से एक मात्र पुत्र थे। इसलिए उन्हें परिवार में विशेष स्नेह मिला। दिल्ली के अशांत वातावरण के बावजूद उनका शैशव सुख–सुविधाओं में बीता। नज़ीर ने अपने शैशव की सुखद स्मृतियों पर दो नज्में लिखीं– 'तिफ्ली' (बचपन) और इशरते–अय्यामे–तिफ्ली' (बचपन का आनंद)। 'इशरते–अय्यामें–तिफ्ली' नज्म इन स्मृतियों के साथ शुरू होती है–

क्या वक्त था वो हम थे जब दूध के चटोरे
हर ऑन ऑचलों के मामूर थे कटोरे

चार–पांच वर्ष के बालक नज़ीर ने नादिरशाह के हाथों दिल्ली को लुटते देखा। वे दिल्ली छोड़कर आगरा चले आये। हिन्दी कविता में यह रीतियुग का दौर था और कवियों में राजाश्रय पाने ही होड़ लगी हुई थी। ऐसे में नज़ीर भरतपुर और लखनऊ से आये बुलावे को ठुकराया 'संतन को कहा सीकरी सो काम'। बहुत दिन तक नजीर का कोई नामलेवा नही था, वे अत्यंत उपेक्षित कवि थे। उन्नीसवीं शताब्दी के आलोचकों ने जिनमें नवाब मुस्तफा–खां 'शेफ्ता' प्रमुख हैं, निकृष्ट कोटि का कवि माना है। नज़ीर की उपेक्षा इसलिए हुई कि उनकी काव्य संवेदना और चेतना निराली थी। उनकी हैसियत तमाम शायरों से बिल्कुल अलग–थलग है। कमोवेश शुरू में नजीर की स्थिति वैसी ही रही है जैसी की हिंदी साहित्य में निराला की। नजीर की कविता निराली इसलिए है कि वे अपने हमअस्त्र शायरों के विचारों का भावानुवाद बनने की बजाय स्वयं संवेदना में विचार करना चाहती है। दुनिया जैसी दिखाई गई, उसे वैसा ही देखने की बजाय अपनी विधि से दुनिया को पढ़ना–परखना चाहती हैं। उपेक्षा और बेकद्री की दलदल में 'नज़ीर' के काव्य को सबसे पहले 1900 ई0 में औरंगाबाद कॉलेज के प्राध्यापक मौलवी सैय्यद मुहम्मद अब्दुल ग़फूर 'शहबाज' ने निकाला। प्रो0 शहबाज की प्रसिद्ध पुस्तक 'जिन्दगानी–ए–बेनज़ीर' है। उसके बाद प्रगतिशील आलोचकों ने नज़ीर का मूल्य समझा और नये सिरे से उनका मूल्यांकन करने लगे।

कवि नज़ीर अपने काल की धारा से बहुत दूर रहकर लोकानुभूति, लोक संस्कृति और सांस्कृतिक जीवन सन्दर्भों के कवि हैं। उनका काव्य भारतीय संस्कृति की वह विशाल धारा है, जिसमें अनेक सांस्कृतिक उपधाराएं आकर मिल गयी हैं। इस सांस्कृतिक धारा को सामासिक संस्कृति की धारा कहा जा सकता है, जिसमें हिंदु–मुस्लिम संस्कृतियों की उपधराएं प्रत्यक्ष रूप से तथा अन्य सांस्कृतिक चेतनाएं अप्रत्यक्ष रूप से समाविष्ट हैं। संस्कृति के इसी स्वरूप को सच्चे अर्थों में भारतीय संस्कृति कहा जा सकता है। नज़ीर अकबराबादी के काव्य में यही व्यापक भारतीय संस्कृति देखने को मिलती है उनका काव्य इसी भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति है।

*** सहायक प्राध्यापक (हिंदी), दयाल सिंह कॉलेज (प्रातः), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110003।**

नामकरण संस्कार भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख संस्कार है। हिन्दू संस्कृति में जन्म से दसवें या बारहवें दिन शुभ तिथि मुहूर्त और गुणयुक्त नक्षत्र में बालक का नामकरण संस्कार किया जाता है। मुस्लिम संस्कृति में भी 'अकीका' के द्वारा शिशु में एक विशिष्ठ गुण की प्रतिष्ठा करने की भावना निहित होती है। दोनों की संस्कृतियों में नामकरण संस्कार के साथ विभिन्न धार्मिक आचारों, लोकाचारों और उत्सव की परंपरा है। कवि नज़ीर ने अपनी कविता में कृष्ण के संबंध में नामकरण संस्कार का उल्लेख किया है–

घुड़नाले छूटीं, नाच हुआ और नौबत का गुलशोर मचा।
फिर किशन गरग ने नाम रखा, सब कुन्बे के मिल बैठे आ।।

विवाह संस्कार भी भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख संस्कार है। विवाह संस्कार गृहस्थ जीवन में प्रवेश का संस्कार है। कवि नज़ीर ने विवाह संस्कार का सम्पूर्ण सांस्कृतिक परम्पराओं, रीतियों के साथ वर्णन किया है। विवाह का सांगोपाग वर्णन उनकी कविता 'ब्याह कन्हैया', महादेव का विवाह' और दसम कथा' नाम रचनाओं में मिलता है। विवाह संस्कार में सबसे पहले कन्या और वर पक्ष की पात्रता होती है। इस पात्रता की पहली शर्त कन्या और वर का विवाह योग्य आयु का होना है। 'महादेव का ब्याह' में कवि इसी सांस्कृतिक पक्ष को उठाता है–

मुख देख दुलारी कन्या का, यूँ बोले राजा रानी से।
अब अपनी गौरा प्यारी की कुछ फिक्र सगाई की करिये।।
तब बोली रानी राजा से, कर जोड़ बहुत बिनती करके।
जो आपके मन में सोचा हुआ है, वही ही मन में है मेरे।।[1]

नज़ीर के काव्य में भक्ति का स्वरूप भारतीय संस्कृति के धार्मिक परिवेश के अनुरूप व्यक्त हुआ है। नज़ीर की मौलिकता है, कि उन्होंने धार्मिक परिवेश को संस्कृति के किसी एक अध्याय तक सीमित नहीं रहने दिया, बल्कि भारतीय संस्कृति के उस स्वरूप की परिधि में ला बिठाया जो सामासिक संस्कृति के रूप में अपना बिम्ब खड़ा कर रही थी। नजीर ने हिंदू और मुसलमान दोनों की अस्थाओं के अनुरूप ईश्वर के सभी मान्य स्वरूपों को अपनी आस्था का विषय बनाया। उनकी रचनाओं हम्द, मुसद्दसकरीमा, इश्क–अल्लाह में मुसलमानों की आस्था के अनुरूप उस परम सत्ता का स्वरूप दिखाई देता है। इस प्रकार हिंदुओं की आस्था उनकी रचनाओं– हरी की तारीफ़, दुर्गाजी के दर्षन, श्रीकृष्णजी की तारीफ आदि में अभिव्यक्त हुई है। धार्मिक आस्था के लिए ईश्वर के महत्व की प्रतिष्ठा होना अनिवार्य है। उसे दयाशील न्यायी होना चाहिए। कवि नज़ीर की आस्था ईश्वर को इसी रूप में प्रतिपादित करती है–

तेरा शुक्रे एहसॉ हो किससे अदा।
हमें महर से तूने पैदा किया।।
किये और अल्ताफ बे इन्तहा।
नज़ीर इस सिवा क्या कहे सर झुका।।
यह सब तेरे इकराम हैं या करीम।।[2]

भारतीय संस्कृति में पर्वोत्सवों का विशेष महत्व है। कवि नज़ीर की दृष्टि इन पर्वों के अनाम में प्रचलित रूप पर ही टिकी है। टिके भी क्यों न कवि नज़ीर तो आम आदमी के कवि हैं, अवाम हीं उनकी काव्य चेतना का स्रोत है और आवाम ही अभिव्यक्ति का आधार भी। उत्सवों के आयोजन जीवन के विभिन्न मांगलिक अवसरों पर सामाजिक संबंधों को प्रेम के सूत्र में दृढ़तापूर्वक बांधने का काम करते हैं, साथ ही व्यक्तियों में सामाजिकता के विकास में एक विशिष्ट भूमिका अदा करते हैं। हिन्दुओं के पर्वों में होली, दिवाली, रक्षाबंधन एवं बसंत पंचमी तथा मुसलमानों के

त्योहारों में शब्बे बारात एवं ईद उलफित्र ही उनके आकर्षण के विषय रहे हैं। नज़ीर का संबंध ब्रजक्षेत्र से था। इसलिए होली की फागें गाने में उनका मन सबसे ज्यादा रमा है। यह प्रेम, सौहार्द, समता, प्रसन्नता की प्रतिष्ठा का सूचक पर्व है। इस दिन सभी लोक सारे भेद भाव भूलकर खुशियों के रंग में एक रंग हो जाते हैं। इस पर्व का धार्मिक महत्व उतना नहीं है जितना सामाजिक। कवि नज़ीर के शब्दों में–

मियॉ तू हम से न रख कुछ गुबार होली में,
के रूढे मिलते हैं आपस में यार होली में।
मची है रंग की कैसी बहार होली में,
अजब यह हिन्द की बहार देखी होली में।

नज़ीर कहते हैं कि होली में 'कोई तो रंग छिड़कता है कोई गाता है, जो खाली रहता है वो देखने को जाता है। यहां कवि का संकेत दूसरे समुदाय के लोगों की ओर है अर्थात् वे भी इसमें शामिल है।

ईद के वर्णनक्रम में कवि नज़ीर हर गरीब–अमीर मुसलमानों के ह्रदय में जाकर झांक आते हैं और ईद की खुशी को अपनी कविता में बड़ी सुंदरता से चित्रित करते हैं। ईद के पर्व पर सिवइयां बनाने और ईदगाह जाने का विशेष महत्व होता है। बच्चे–बूढ़े–जवान, स्त्री–पुरूष सभी में इनके प्रति एक नवीन उत्साह भरा होता है–

पिछले पहर से उठ के नहाने की धूम है।
शीरो शकर सिवय्यां पकाने की धूम है।।
पीरों जवां की नैमतें खाने की धूम है।
लड़कों को ईदगाह जाने की धूम है।।
ऐसी न शब्बरात न बकरीद की खुशी।
जैसी हर एक दिल में है इस ईद की खुशी।।

भारतीय संस्कृति में मनोविनोद परक क्रीड़ाएं भी विशेष महत्व रखती है। नज़ीर के काव्य में उन सबका समावेश हुआ है। जुआ और दिपावली का बड़ा गहरा संबंध है। नज़ीर ने दीवाली के संबंध में जुआ के साथ जुड़ी हुई अनेक मानसिकताओं का चित्रण करते हैं। दीवाली के संदर्भ में जुआ को सगुन के रूप में देखा जाता है। कवि नज़ीर भी इसको इसी रूप में चित्रित करते है–

शगुन की बाजी लगी पहली बार गन्डे की।
फिर उससे बढ़ के लगी तीन–चार गन्डे की।।

भारतीय संस्कृति में तैराकी उपयोगीता और मनोरंजन दोनों ही दृष्टियों से महत्वपूर्ण रही है। समाज के हर आयु और हर वर्ग के व्यक्ति में तैराकी के प्रति कितना लगाव था नज़ीर की इन पंक्तियों से हम सहज अनुमान लगा सकते हैं–

भोले, सयाने, नादां हुशियार पैरते हैं।
पीरो जवान लड़के अय्यार पैरते हैं।।

कवि नज़ीर के आमफहम शब्दों के कोश के कारण उनकी कविता आवाम के निकट है। यहां आवाम भारतीय तहज़ीब का ही प्रतिबिम्बन है। कवि नज़ीर की भाषा में ग्रामीण शब्दों के प्रयोग की छटा भी देखने योग्य है। उन्होंने ग्रामीण शब्द का प्रयोग करके भावाभिव्यक्ति को जो सहजता दी है और उसे जितना जन सामान्य को निकट लाने में सफल हो सके हैं वह भाषा के क्षेत्र में क्रांतिकारी कदम है। नज़ीर की इसी विशेषता को लक्ष्य करके रामधारी सिंह 'दिनकर' का

यह कथन उल्लेखनीय है, ''काव्य में जब भी शैली प्रधान हो उठती है और भाव गौण हो जाते हैं, तभी कविता जन–जीवन से दूर होने लगती है। यह कहना सत्य है कि उर्दू के कवि कला के शौक में भारत से निकलकर ईरान चले गये। फिर तो उर्दू का स्टैण्डर्ड इतना विचित्र हो उठा कि नज़ीर अकबरावादी जैसे कवि भी श्रेष्ठ कवियों की पंक्ति से बहिष्कृत समझे जाने लगे। उर्दू के आलोचक इसका कारण यह बताते हैं कि नज़ीर उर्दू–ए–मुअल्ला के मालिक नहीं है यानि फसीह और टकसाली उर्दू नहीं लिखा है। लेकिन बहुत से लोग मानते हैं कि उर्दू के अदीबों ने नज़ीर अकबरावादी कर उचित सम्मान इसलिए नहीं किया कि उनके अधिकांश विषय भारतीय है।''[3]

कह सकते हैं कि नज़ीर का साहित्य भारतीय संस्कृति के विभिन्न कोणों को आमफहम शब्दों में बड़ी सजगता के साथ चुन–चुनकर सांस्कृतिक स्वरूप का चित्र प्रस्तुत करता है। उनका काव्य भारत की अखण्ड संस्कृति का एक मानचित्र प्रस्तुत करता है जिसमें विभिन्न धाराओं का सम्मिलित रूप देखने को मिलता है। नज़ीर अकबरावादी आज भी हमारे बीच अपने काव्य की अर्थवत्ता की वजह से जिंदा है।

''हर जाने वाला जाता है तस्वीर मगर रह जाती है
हर जाने वाले कैदी की जंजीर मगर रह जाती है।।''

संदर्भ–सूची :–

1. डा. अब्दुल अलीम, नज़ीर अकबराबादी और उनकी विचारधारा, पृ. 100।
2. वही, पृ. 114।
3. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 459।

ꕥ★ꕥ

पुष्टिमार्गीय भक्ति में अष्टयाम-सेवा-पद्धति

शालिनी भट्ट *

हिंदी साहित्य में भक्ति काल का अपना एक अहम और महत्वपूर्ण स्थान है। आदिकाल के बाद आये इस युग को पूर्व मध्यकाल भी कहा जाता है। जिसकी समयावधि संवत् 1375 से संवत् 1700 तक की मानी जाती है। हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल का समय ईसवी सन् चौदहवी शताब्दी मध्यभाग के सत्रहवीं सदी के मध्यभाग तक माना जाता है।[1] यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है। जिसको जॉर्ज ग्रियर्सन ने स्वर्णकाल, श्यामसुन्दर दास ने स्वर्णयुग, आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने भक्ति काल एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक जागरण काल कहा। सम्पूर्ण साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएँ इसी युग में प्राप्त होती हैं। दक्षिण में आलवार बंधु नाम से कई प्रख्यात भक्त हुए हैं। इनमें से कई तथाकथित नीची जातियों के भी थे। वे बहुत पढे–लिखे नहीं थे, परंतु अनुभवी थे। आलवारों के पश्चात दक्षिण में आचार्यों की एक परंपरा चली जिसमें रामानुजाचार्य प्रमुख थे। रामानुजाचार्य की परंपरा में रामानंद हुए। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। वे उस समय के सबसे बड़े आचार्य थे। उन्होंने भक्ति काल के क्षेत्र में ऊँच–नीच का भेद तोड़ दिया। सभी जातियों के अधिकारी व्यक्तियों को अपना शिष्य बनाया। उस समय का प्रमुख एकता का सूत्र बन गया था– जाति–पांति पूछे नहिं कोई।/हरि को भजै सो हरि का होई।।

रामानंद ने विष्णु के अवतार राम की उपासना पर बल दिया। रामानंद ने और उनकी शिष्य–मंडली ने दक्षिण की भक्तिगंगा का उत्तर में प्रवाह किया। समस्त उत्तर–भारत इस पुण्य–प्रवाह में बहने लगा। भारत भर में उस समय पहुँचे हुए संत और महात्मा भक्तों का आविर्भाव हुआ। महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टि–मार्ग की स्थापना की और विष्णु के कृष्णावतार की उपासना करने का प्रचार किया। उनके द्वारा जिस लीला–गान का उपदेश हुआ उसने देशभर को प्रभावित किया। अष्टछाप के सुप्रसिध्द कवियों ने उनके उपदेशों को मधुर कविता में प्रतिबिंबित किया– "कृष्ण भक्ति का प्रारम्भ पहले हो चुका था, इसका सांगोपांग स्वरूप निरूपण तथा श्रीकृष्ण को ब्रहा–रूप में प्रतिष्ठा करने का श्रेय श्रीमद्भागवत को ही है। आचार्य निम्बार्क, विष्णुस्वामी और मध्वाचार्य ने कृष्ण को स्वयंरूप मानकर कृष्ण भक्ति का प्रचार किया और दर्शन के रूप में क्रमशः द्वैताद्वेत या सनक सम्प्रदाय शुद्धाद्वेत और रूद्र सम्प्रदाय तथा द्वेत या ब्रह्य सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा की तीनों ने कृष्ण भक्ति के द्वारा परम पुरूषार्थ को मोक्ष की प्राप्ति माना है। निम्बार्क और विष्णुस्वामी ने कृष्ण के साथ राधा की उपासना को महत्त्व दिया है उनकी भक्ति भावना में श्रीमद्भागवत के माधुर्य भाव की प्रधानता है"।[2]

भक्तिकाल में कृष्ण भक्ति का प्रचार कृष्ण की जन्म एवं लीलाभूमि में व्यापक रूप में हुआ। वैष्णव भक्ति सम्प्रदायों में वल्लभाचार्य–पुष्टिमार्ग, निम्बार्काचार्य–निम्बार्क, श्री हितहरिवंश राधावल्लभ, स्वामी हरिदास–हरिदासी, चतैन्य महाप्रभु–गौडीय संप्रदाय सभी सम्प्रदायों में पूर्व ब्रह्म श्रीकृष्ण तथा श्री राधा उनकी आह्लाहदिनी शक्ति की उपासना की गयी। सत, चित, आनंद स्वरुप श्री कृष्ण नन्द और यशोदा के आँगन में विभिन्न बाल लीलाओं के माध्यम से समस्त गोकुलवाासियों को आनंद प्रदान करते है। बाल रूप में ही राक्षस–राक्षसियों का विनाश कर अपने दिव्य रूप को सहज ग्राह्य बना देते है। वे ही सर्वव्यापक, अवविनाशी, अजर, अमर, अगम आदि विशेषणों से युक्त होते हुए भी ब्रज के प्रत्येक प्राणी को उसके भावानुरूप आनंद प्रदान करते है।

*** शोधार्थी, हिन्दी विभाग, माधव विश्वविद्याल, सिरोही पिण्डवाड़ा, राजस्थान– 30702।**

हिंदी साहित्य में कृष्ण भक्ति पर आधारित काव्यों की लम्बी परंपरा है (आदिकालीन कृष्ण काव्य में चदंबरदाई और विद्यापति उल्लेखनीय है) कृष्ण भक्ति में वल्लभाचार्य का विशेष प्रभाव रहा है। श्रीकृष्ण परमब्रह्म कहलाते हैं, वे भक्तों के आराध्य होने के साथ–साथ लोकरक्षक और लोकरजंक भी है।[3] भक्तिकालीन कृष्ण भक्त कवियों पर महाप्रभु वल्लभाचार्य का विशेष प्रभाव है। उन्होंने श्रीकृष्ण के बाल एवं किशोर रूप की लीलाओं का गायन किया तथा गोवर्धन पर श्रीनाथ जी को प्रतिष्ठित कर एक मंदिर बनवाया। उन्होंने भगवान के अनुग्रह की महत्ता पर बल दिया। पुष्टिमार्ग का अनुयायी भक्त आत्मसमर्पण युक्त रसात्मक प्रेम द्वारा भगवान की लीला में तल्लीन होकर आनन्दावस्था को प्राप्त होता है।

वल्लभसम्प्रदाय के संस्थापक आचार्य वल्लभ के अनुसार श्रीकृष्ण ही पूर्णानंद स्वरूप पुरूषोत्म ब्रह्य है वे सत्, चित्त और आन्नदस्वरूप हैं वे व्यापक नाशरहित सर्वशक्तिमान स्वतंत्र सर्वज्ञ सजातीय–विजातीय भेदरहित है और उनके अनन्त रूप हैं। इस जगत में वे ही संपूर्ण धर्मों के आश्रय हैं।[4]

पुष्टिमार्गीय भक्ति

भगवान के सुख का विचार करना ही पुष्टि–भक्ति है। श्रीमद्वल्लभाचार्यजी ने वात्सल्यरस से ओतप्रोत (प्रेमलक्षणा) भक्ति पद्धति की सीख दी जिसे 'वल्लभ सम्प्रदाय' या 'पुष्टिमार्ग' कहा जाता है। भक्त को प्रेमरस में डुबाकर, अहंता–ममता को भुलाकर, दीनतापूर्वक प्रभु की सेवा कराने वाली भक्ति पुष्टि–भक्ति कहलाती है। 'पुष्टि' अर्थात् पोषण का अर्थ है–'भगवान श्रीकृष्ण का अनुग्रह या कृपा'।[5]

पुष्टिमार्ग में पूजा का अर्थ है ठाकुरजी की सेवा– अन्य भक्तिमार्गों में भगवान की अर्चना को 'पूजा' कहा जाता है परन्तु पुष्टिमार्ग में प्रभु की अर्चना को 'सेवा' कहा जाता है। 'चित्त को भगवान से जोड़ देना ही सेवा है।' पुष्टिमार्ग में भगवान की सेवा पूर्ण समर्पण के साथ नंदनन्दन को प्रसन्न करने और सुख देने के लिए की जाती है। पुष्टिमार्ग में भाव ही साधन और भाव ही फल है। पुष्टिभक्त के हृदय में भावात्मक भगवान विराजते है और इस भाव की सिद्धि के लिए वह प्रभु के अनेक मनोरथ करता है। प्रभु को आरती, स्नान, भोग, वस्त्रालंकार, पुष्पमाला, कीर्तन और विभिन्न उत्सव आदि से रिझाया जाता है। पुष्टि–भक्ति की सिद्धि प्रभु के चरण में सर्वस्व–तन–धन का समर्पण करने से होती है।

श्री वल्लभाचार्य का मत है कि घोर कलिकाल में ज्ञान, कर्म, भक्ति, आदि मोक्ष–प्राप्ति के साधनों की न तो पात्रता रही है और न क्षमता ही है। इन साधनों के उपयुक्त देश, काल, द्रव्य, कर्ता, मंत्र और कर्म या तो नष्ट हो गये हैं या दूषित हो गये हैं। अतः इन उपायों से मोक्षप्राप्ति या भगवान् की प्राप्ति कर सकना संभव नहीं रह गया है। ऐसी विषम परिस्थिति में भी सबके उद्धार के लिए अवतरित होने वाले सर्वसमर्थ, परम कृपालु भगवान् श्रीकृष्ण ही अपने स्वरूप के बल से, प्रमेय बल से, अपने भगवत्–सामर्थ्य से जीवो का उद्धार कर सकते हैं। वल्लभाचार्य के द्वारा प्रतिष्ठित पुष्टि सम्प्रदाय में भगवत् कृपा पर सर्वाधिक महत्व दिया गया है। इस मार्ग में दीक्षित होते समय भक्त 'श्रीकृष्ण शरणं गम' गुरूमंत्र को ग्रहण करता है। वल्लभाचार्य ने पुष्टि भक्ति को साधारण भक्ति से भिन्न माना है।[6] अतः श्री वल्लभाचार्य घोषित करते हैं– 'कृष्ण एव गतिर्मम' अर्थात् एकमात्र श्रीकृष्ण ही हमारी गति, अनन्य आश्रय या एकमात्र शरणस्थल हैं। इस निर्णय पर पहुँचकर वल्लभाचार्य जी ने शास्त्रों में वर्णित, भगवत्–प्राप्ति के साधन रूप से

प्रतिष्ठित, विहित, विधि–प्रधान भक्तिमार्ग से भिन्न विशुद्ध प्रेमप्रधान स्वतंत्र भक्तिमार्ग का उपदेश दिया। इसे पुष्टिमार्ग नाम दिया। निःसाधनों का राजमार्ग कहते हैं। जिनके पास भगवत्–प्राप्ति के उपाय रूप कर्म, ज्ञान, भक्ति आदि कोई साधन नहीं है, ऐसे निःसाधन भक्तों के लिए भगवत्–कृपा ही भगवत् प्राप्ति का एकमात्र साधन है। यही पुष्टिमार्ग है। श्रीमद् वल्लभाचार्य ने अपने भक्तिमार्ग का नामकरण पुष्टिमार्ग श्रीमद्भागवत के आधार पर किया है।[7]

श्रीमद्भागवत में शुकदेवजी ने पुष्टि अर्थात् पोषण का अर्थ भगवान् का अनुग्रह किया है। भगवान् श्रीकृष्ण का अनुग्रह या कृपा ही पुष्टि है। अनुग्रह या कृपा भगवान के सभी दिव्य धर्मो में सबसे बलिष्ठ है। भगवत्–कृपा के सम्मुख भगवत्–प्राप्ति में बाधा उपस्थित करने वाले काल, कर्म, स्वभाव आदि कोई भी बाधक तत्व टिक नहीं पाते हैं। शास्त्रों में भगवान की प्राप्ति करने के ज्ञान, भक्ति आदि जो भी साधन बताये गये हैं, वे सब जीव–कृति–साध्य है, अर्थात् उन साधनों के लिए जीव को स्वयं प्रयत्नशील होना पड़ता है, स्वयं ही इनकी साधना करनी पड़ती है, इसलिए इन्हें 'विहित साधन' भी कहा जाता है। इन मार्गो को मर्यादामार्ग अभिधान दिया गया है। शास्त्रों में वर्णित 'मर्यादा मार्ग' के ऊपर बताये गये विहित साधनों के अभाव में भी, जीव की पात्रता–अपात्रता, योग्यता–अयोग्यता पर विचार न करते हुए जब भगवान् अपने स्वरूप बल से, भगवद्–सामर्थ्य से जीव का उद्धार कर देते हैं तो उसे पुष्टि कहा जाता है। पुष्टिमार्ग का अर्थ उस प्रेमप्रधान भक्तिमार्ग से है, जहाँ भक्ति की प्राप्ति भगवान् के विशेष अनुग्रह से, कृपा से ही संभव मानी जाती है तथा यह दृढ़ विश्वास किया जाता है कि भगवान् जिस पर कृपा करते हैं, जिसे वे मिलना चाहते हैं, उसे ही मिलते हैं। इस विषय में जीव के प्रयत्न कोई महत्त्व नहीं रखते। मर्यादाभक्ति और पुष्टिभक्ति के सन्दर्भ में बन्दरिया के बच्चे और बिल्ली के बच्चों का उदाहरण दिया जाता है। बन्दरिया के बच्चे को अपनी माँ को स्वयं ही पकड कर रखना पड़ता है। इसी प्रकार मर्यादामार्गीय भक्त को भगवत् प्राप्ति के लिए स्वयं ही प्रयत्नशील होना पड़ता है। बिल्ली के बच्चे को अपनी ओर से कुछ भी नहीं करना पड़ता। उसकी माँ को ही उसे मुँह से पकड़ कर उठाकर ले जाना पड़ता है। पुष्टिमार्गीय भक्त के लिए भगवान स्वयं ही साधन बन जाते है।

भगवान पुष्टि भक्त के हृदय में अपने प्रेम बीज रख देते हैं। भक्ति से वह बढ़ता चलता है। क्रमशः आसक्ति और व्यसन की स्थिति तक पहुँच जाता है। इसलिए पुष्टिजीव को सर्वदा सर्वभाव से भगवत् सेवा करना चाहिए। यह उसका धर्म है, यही उसका परम कर्तव्य है। इसके बाद तो प्रभु उसके कल्याण के लिए सब कुछ करेंगे ही, अतः उसे अन्य कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए। भगवत् सेवा न तो कोई कर्मकाण्ड और न पार्ट टाईम जॉब है। भगवत सेवा तो भगवत्–प्रवणता है, प्रभु में तन्मयता है। जैसे गंगा की धारा निरन्तर बहती ही रहती है तथा अन्ततः अपनी गन्तव्य समुद्र में मिल जाती है, उसी प्रकार भक्त के मन में प्रभु के प्रति प्रेम का सतत निरन्तर, अखंड प्रवाह भगवान् के प्रति होना चाहिए। उसका मन भगवान् में तल्लीन रहना चाहिए। यह स्थिति क्रमशः परिपक्व होती चलती है।

पूजा षोडशोपचार, धूप–दीप, नैवेद्य, नमस्कार, स्तोत्रपाठ आदि में समाप्त हो जाती है, किन्तु सेवा में भगवत्–सम्बंधी प्रत्येक कार्य जैसे भगवान के बर्तन माँजना, आँगन झाड़ना–पोंछना–लीपना, पानी भरना आदि भी भगवत् सेवा के अन्तर्गत ही है। पूजामार्ग में जो वस्तु भगवान् को समर्पित कर दी जाती है, उसको ग्रहण करना निषिद्ध है, किन्तु सेवामार्ग में प्रत्येक वस्तु भगवान् को समर्पित करने के उपरान्त ही प्रसाद के रूप में ग्रहण करने का विधान है। सेवामार्ग में असमर्पित वस्तु सर्वथा त्याज्य है, वर्जित है। पूजा नियम समय पर, निश्चित अवधि में सम्पन्न हो जाती है,

किन्तु भावात्मक सेवा सर्वदा निरन्तर चलती रहती है। श्री वल्लभाचार्य का कथन है कि भगवत्–प्रवण चित्त हो जाना ही सेवा है। पूजामार्ग में प्रतिमा की प्राण–प्रतिष्ठा से उसमें देवत्व का आवेश होता है, किन्तु सेवामार्ग में भाव से भगवद्–आविर्भाव माना जाता है। पूजामार्ग में भगवान् की प्रतिमा का अर्चन होता है, किन्तु सेवामार्ग में उसे साक्षात् भगवान् का स्वरूप मानकर ही भावात्मक सेवा की जाती है। इसी कारण खंडित प्रतिमा की पूजा निषिद्ध मानी जाती है, जबकि सेवामार्ग में भगवत्–स्वरूप खंडित भी हो जाए तो भावात्मकता होने के कारण, यदि उससे भावों में बाधा न पहुँचती हो तो, वह सेवनीय होता है।

अष्टयाम सेवा का अर्थ, उद्देश्य और अंग

अष्टयाम सेवा आठ प्रहरों (यामों) में की जाती है। प्रातःकाल से शयन तक इसके – (1) मंगला (2) श्रृंगार (3) ग्वाल (4) राजभोग (5) उत्थापन (6) भोग (7) संध्या–आरती और (8) शयन–ये आठ रूप हैं। अष्टयाम सेवा का उद्देश्य भगवान की लीलाओं में मन को लगाये रखना है। पुष्टिसम्प्रदाय में बालभाव एवं गोपीभाव से प्रभु की सेवा होती है। सेवा के अंग हैं–भोग, राग तथा श्रृंगार।[8] भोग में विविध व्यंजनों का भोग प्रभु को लगता है। राग में वल्लभीय (अष्टछाप) भक्त कवियों के पदों का कीर्तन होता है तथा श्रृंगार में ऋतुओं के अनुसार भगवान के विग्रह का श्रृंगार होता है।

पुष्टिमार्ग में अष्टयाम दर्शन सेवा-भावना

1. **'मंगला' दर्शन की भावना** –मंगला की झांकी में पहले श्रीकृष्ण को जगाया जाता है, उसके बाद मंगल–भोग (दूध, माखन, मिश्री, बासुन्दी) रखा जाता है, फिर आरती की जाती है। यशोदाजी द्वारा सेवित मंगला का भाव इस प्रकार है– 'बालकृष्ण यशोदाजी की गोद में विराजमान हैं, माँ उनके मुखकमल का दर्शन कर उसे चूम रही हैं। नन्दबाबा प्रभु को गोद में लेकर लाड़ लड़ा रहे हैं। सखा गोपाल के गुणों का गान कर रहे हैं। व्रजसुन्दरियाँ अपने नयनकटाक्ष से ही उनका पूजन कर रही हैं। नंदनन्दन मिश्री और माखन का कलेवा कर रहे हैं। प्रभु की मंगल आरती हो रही है।

   मंगल माधो नाम उच्चार।
   मंगल वदन कमल कर मंगल, मंगल जन की सदा संभार।।१।।
   देखत मंगल पूजत मंगल, गावत मंगल चरित उदार।
   मंगल श्रवण कथा रस मंगल, मंगल तनु वसुदेव कुमार।।२।।
   माहात्म्य – मंगला के दर्शन करने से मनुष्य कभी दरिद्र नहीं होता है।

1. **'श्रृंगार' दर्शन की भावना–** मंगला की सेवा के बाद माता यशोदा अपने बालगोपाल का ऋतु अनुकूल श्रृंगार करती हैं। उबटन लगाकर तथा स्नान कराकर वे श्यामसुन्दर को पीताम्बर

धारण कराती हैं। श्रृंगार नित्य में सामान्य होते है किन्तु उत्सव महोत्स्व मनोरथोदि पर भारी एवं विभिन्न आभूषणों को धराया जाता है। श्रृंगार चार प्रकार की भावना के कहे जाते है :
(1) कटि पर्यन्त (2) मध्य के (3) छेड़ा के (4) चरणारविन्दनार्थ

आभूषण ऋतुनुसार धराये जाते है– उष्णकाल में मोती, फाल्गुन में सुवर्ण तथा दूसरी ऋतु में रत्न जड़ित प्रभु के मुखकमल की और हाथ में वेणु व मस्तक पर मोरपंख की शोभा अनुपम है। व्रजसुन्दरियाँ और भक्त उनके दर्शन कर अपने को धन्य मानते हैं।

आवो गोपाल श्रृंगार बनाऊ।
विविध सुगंधन करूं उबटनों पाछे उष्णजल सों न्हवाऊं।।
अंग अंगोछ गुहूं तेरी बेनी फूलन रचरच भाल बनाऊं।
सुरंग पाग जरतारी चीरा रत्नखचित सिरपेच बंधाऊं।।
बागो लाल सुन्हेरी छापो हरि इजार चरणन विरचाऊं।
पटुका सरस बैंगनी रंग को हंसुली हार हमेल धराऊं।।
गजमोतिन के हार मनोहर वनमाला ले उर पहेराऊं।
ले दर्पण देखो मेरे प्यारे निरख निरख उर नयन सिराऊं।।
मधुमेवा पकवान मिठाई अपने कर ले तुम्हें जिमाऊं।
विष्णुदास को यही कृपाफल बाललीला निशिदिन गाऊं।।

माहात्म्य – श्रीकृष्ण के श्रृंगार के दर्शन करने से मनुष्य स्वर्गलोक प्राप्त करता है।

2. **'ग्वाल' दर्शन की भावना–** श्रृंगार के बाद ग्वाल सेवाभावना में श्रीकृष्ण ग्वालबालों के साथ गोचारण के लिए जा रहे हैं। माता यशोदा सीख देती हैं–'गोपाल! गहन वन और जलाशय की ओर न जाना, गोपबालकों के साथ रहना, जीवजन्तु वाली जमीन पर अपने सुन्दर चरणों को मत रखना और दौड़ती हुई गायों के पीछे मत दौड़ना।' गोचारण के लिए बालगोपालों के साथ जाते हुए श्यामसुन्दर वेणु बजाकर गौओं को अपनी ओर बुला रहे हैं। प्रभु के वेणुनाद से चराचर जगत मुग्ध है, बंशीध्वनि से श्रीकृष्ण गोपियों का धैर्य हर लेते हैं। श्रीकृष्ण की ग्वालमण्डली नृत्यगीत आदि में लीन है।

आगे गाय पाछे गाय इत गाय उत गाय
गोविंद को गायन में बसबोई भावे।।
गायन के संग धावे गायन में सचु पावे
गायन की खुररेणु अंग लपटावे।।
गायन सों ब्रज छायो बैकुण्ठ बिसरायो
गायन के हेत कर गिरि ले उठावे।
छीतस्वामी गिरिधारी विट्ठलेश वपुधारी
ग्वारिया को भेष धरें गायन में आवे।।

माहात्म्य – ग्वाल सेवा के दर्शन करने से मनुष्य की मान–प्रतिष्ठा बढ़ती है।

3. **'राजभोग' दर्शन की भावना–** ग्वाल सेवाभावना के बाद राजभोग का दर्शन होता है। प्रभु के गोचारण के लिए चले जाने के बाद माता यशोदा मन में सोच–सोचकर व्याकुल हैं कि वन में कड़ी धूप में गौएं चराने के बाद मेरा गोपाल भूखा होगा। इसलिए स्वर्ण व रजत पात्रों में तरह–तरह के पकवान गोपी के हाथ वन में भेज रही हैं। माता यशोदा गोपी को सावधान करती है कि सब सामग्री अच्छी तरह से रख दी है न, एक–दूसरे में मिल न जाए। ऐसा कहते हुए उनकी आँखों से प्रेमाश्रु झरने लगते हैं। गोपी राजभोग नंदनन्दन के सामने परोसती है। प्रभु यमुनातट पर गोपमण्डली के साथ राजभोग अरोग रहे हैं।

वृंदावन वन में स्याम चरावत गैया।
वृंदावन में बंसी बजाई बैठे कदम्ब की छैया।
भांति–भांति के भोजन कीनै पठये यशोमति मैया।
सूरदास प्रभु तुम चिरजीवो मेरे कुंवर कन्हैया।।

माहात्म्य – राजभोग के दर्शन करने से मनुष्य भाग्यवान होता है।

4. **'उत्थापन' दर्शन की भावना–** राजभोग के बाद श्रीकृष्ण दोपहर में कुंज में शयन करते हैं। छः घड़ी दिन शेष रहने पर जब उन्हें जगाया जाता है, उसे उत्थापन–दर्शन कहते हैं। सखियाँ कुंजभवन के सामने आकर खड़ी हो जाती हैं और प्रभु की लीलाओं का वर्णन करके उन्हें जगाती हैं–'हे राधिकाकान्त! आपके जागने का समय हो गया है। गायों के साथ गोपबालक व्रज में जाने के लिए आपकी बाट जोह रहे हैं। गोवर्धन पर पुलन्दियों (भीलनियों) के साथ गोपियाँ वन के विभिन्न प्रकार के कन्द–फलों को लिए आपकी बाट जोह रही हैं। आप वहाँ पधारकर उनका मनोरथ पूर्ण कीजिए।'

ग्वाल कहत सुनों हों कन्हैया।।
घर जेवे की भई है बिरीयां दिन रह्यो घड़ी छैयां।।
शंखधुन सुन उठे हैं मोहन लावो मुरली कहाँ धरैया।।
गैया सगरी बगदावो रे घर को टेर कहत बलदाऊ भैया।।
(परमानन्ददासजी)

माहात्म्य – उत्थापन के दर्शन करने से मनुष्य उत्साही बना रहता है। मनुष्य की अकर्मण्यता दूर हो जाती है।

5. **'भोग' दर्शन की भावना–** सखियों के ऐसा कहने पर लीलापुरुषोत्तम नन्दलाल शय्या से उठकर गिरिराज पर पधारते हैं और कन्द–मूल–फल आदि अरोगते हैं। यह भोग के दर्शन हैं। भोग अरोगने के बाद बाट देखती माँ की व्याकुलता की जब प्रभु को याद आती है तो वे संध्याकाल में घर की ओर चल पड़ते हैं।

कंदमूल फल तरमेवा धरी ओटि किये मुरकैया
आरोगत व्रजराय लाडिलो झूंठन देत लरकैया।।
उत्थापन भयो पहोर पाछलो व्रजजन दरस दिखैया।
परमानन्द प्रभु आये भवन में शोभा देख बलजैया।।

माहात्म्य – भोग के दर्शन करने से मनुष्य की भगवान के चरणकमलों में प्रीति बनी रहती है।

6. 'संध्या–आरती' दर्शन की भावना

गोधूलि–वेला में श्रीकृष्ण मन्द–मन्द वेणु बजाते हुए घर लौट रहे हैं। गोपियाँ प्रभु का मुखारविन्द निहारती हैं और वेणुवादन सुनकर रसमग्न हो जाती हैं। पुत्र को देखकर यशोदाजी का वात्सल्य उमड़ पड़ता है। उनके सारे शरीर में स्वेद (पसीना), रोमांच, कम्पन और स्तम्भन होने लगता है। वे कपूर, घी व कस्तूरी से सनी सुगन्धित बाती से उनकी आरती उतारती हैं। श्रीकृष्ण उनके इस भाव से मुग्ध हो रहे हैं।

लाल के बदन कमल पर आरती वारुं।
चारु चितवन करों साज नीकी युक्ति सों,
बाती अनगित घृत कपूर की बारुं।।

माहात्म्य – संध्या–आरती के दर्शन करने से मनुष्य की दूषित भावनाएँ (स्वार्थीपन आदि) व नकारात्मकता समाप्त हो जाती है।

7. **'शयन' दर्शन की भावना–** संध्या–आरती के बाद शयन सेवा होती है। यशोदा अपने लाल को शयनभोग अरोगने के लिए कहती हैं–'मैंने अनेक प्रकार की स्वादिष्ट सामग्री सिद्ध (बनाई) की है। सोने के कटोरे में नवनीत और मिश्री भी है।' प्रभु भोजन करते हैं। इसके बाद दूध के समान धवल शय्या पर शयन के लिए जाते हैं। माता यशोदा उनकी पीठ पर हाथ फेरकर सो जाने का अनुरोध करती हैं और उनकी लीलाओं का गुणगान कर सुलाती हैं।

माँ अपने लाल को सोया जानकर उनके पास एक गोपी को बिठाकर अपने कक्ष में चली जाती हैं। सखियों का समूह प्रभु का दर्शन करके निवेदन करता है कि श्रीस्वामिनी (पुष्टिमार्ग में श्रीराधा को स्वामिनीजी कहा जाता है) आपकी बाट देख रही हैं, शय्या आदि सजाकर प्रतीक्षा कर रही हैं। श्रीस्वामिनीजी की विरहावस्था का वर्णन सुनकर करोड़ों कामदेवों के लावण्य वाले श्यामसुन्दर शय्या त्यागकर तुरन्त मन्द–मन्द गति से सखियों के बताये मार्ग पर धीरे–धीरे चलने लगते हैं। मन्द–मन्द मुरली बजाते वे मन्दिर में प्रवेश करते हैं। यही प्रिया–प्रियतम की दिव्य झांकी है।

दोउ मिल पोढ़े ऊँची अटा हो।
श्यामघन दामिनी मानो उनयी घटा हो।।
अंगसों अंग मिले तनसों तन ओढे पीतपटा हो।
देखत बने कहत नही आवे सूर स्याम छटा हो।।

माहात्म्य – शयन के दर्शन करने से मनुष्य के मन में शान्ति व भगवान के चरणकमलों में प्रीति बनी रहती है।

श्रीकृष्ण को ही अपना एकमात्र अनन्य आश्रय मानना पुष्टिमार्गीय जीवन–प्रणाली की आवश्यक शर्त है। 'श्रीकृष्ण शरणं मम' इस मन्त्र की दीक्षा से भक्त अपने को भगवान में अर्पित कर देता है। इस प्रकार भगवत् स्वरूप की प्राप्ति का आनन्द ही पुष्टिभक्ति का एकमात्र फल है।

सारांश :– पुष्टिमार्ग पर भगवान् का अनुग्रह ही नियामक होता है, अन्य कोई नियम या शास्त्रीय विधान नियामक नहीं होता। मर्यादा भगवान् के अधीन होती है, लेकिन पुष्टि स्वाधीन होती है। पुष्टि में भक्त का स्वतंर्त्य होता है, अर्थात् कृपालु भगवान अपने निःसाधन प्रेमी भक्त की इच्छानुसार कार्य करते हैं। भगवान् इसी कारण यशोदा मैया की इच्छानुसार रस्सी में बँध गये थे तथा गोपियों की इच्छा से छछिया पर भर छाछ पर नाचते थे। पुष्टिमार्ग में भक्त का दैन्य ही भगवत् कृपा का साधन है। यशोदा मैया, बन्दरिया और बिल्ली के बच्चे (मार्जार) के उदाहरण द्वारा पुष्टिमार्ग पर भक्त की भक्ति को यर्थात पूर्वक समझा जा सकता है। श्री वल्लभाचार्य का निर्देश है कि विधि की अपेक्षा स्नेह बलिष्ठ है। सेवामार्ग में भगवत् सुख ही सर्वोपरि है। पूजा सकाम हो सकती है, किन्तु सेवा सदैव निष्काम, केवल भगवत् सुख के लिए ही होती है।

अष्टयाम सेवा भावना का आश्रय है। पुष्टिमार्ग में सेवा के साधन और फल में अंतर नहीं माना गया है। दोनों एक ही है। प्रातःकाल से शयन तक इसके – मंगला, श्रृंगार, ग्वाल, राजभोग, उत्थापन, भोग, संध्या–आरती और शयन – ये आठ रूप हैं। अष्टयाम सेवा का उद्देश्य भगवान की लीलाओं में मन को लगाये रखना है।

महाप्रभु श्री हरिराय जी द्वारा
कृष्ण सर्वदा स्मर्यः सर्व लीला समान्वित।[९]

श्रीकृष्ण का स्मरण होने से चित उनकी सेवा में महज ही प्रवृत हो जाता है।

विभिन्न दर्शनों के महिमा माहत्मय है –

मंगला – के दर्शन करने से कंगाल नहीं होते कभी।
श्रृंगार – के दर्शन करने से स्वर्ग लोक मिलता है।

ग्वाल – के दर्शन करने से प्रतिष्ठा बनी रहती है।
राजभोग – के दर्शन करने से भाग्य प्रबल होता है।
उत्थापन – के दर्शन करने से उत्साह बना रहता है।
भोग – के दर्शन करने से भरोसा बना रहता है
संध्या – आरती के दर्शन करने से स्वार्थ कभी नहीं रहता ।
शयन – के दर्शन करने से शान्ति बनी रहती है।

संदर्भ–सूची :–

1. नायक, डॉ सुधांशु कुमार, 'सूरदास और जगन्नाथ दास की भक्ति', पृ. सं 132।
2. नायक, डॉ सुधांशु कुमार, 'सूरदास और जगन्नाथ दास की भक्ति', पृ. सं 128।
3. डॉ नगेन्द्र, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ. सं 195।
4. डॉ नगेन्द्र, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ. सं 189।
5. त्रिपाठी यदुनन्दन नारायणजी शास्त्री, 'श्रीजीदर्शन', प्रकाशक मंदिर मण्डल नाथद्वारा, पृ. सं 15
6. नायक, डॉ सुधांशु कुमार, 'सूरदास और जगन्नाथ दास की भक्ति', पृ. सं 129
7. शर्मा, डॉ. गजानन, श्रीमद्वल्लभ वस्तुतः कृष्ण एव सिदांन्त एवं सन्देश, वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास, इन्दौर, 2012, पृष्ठ सं 263।
8. त्रिपाठी यदुनन्दन नारायणजी शास्त्री, 'श्रीजीदर्शन', प्रकाशक मंदिर मण्डल नाथद्वारा, पृ. सं 67।
9. https://www.nathdwaratemple.org/pushtimarg/pushtimarg-darshan-sewa-bhavana

मानवीय संवेदनाओं के सजग प्रहरी : मुंशी प्रेमचंद

डॉ. विकास चन्द्र मिश्र*

प्रेमचन्द व्यक्ति नहीं बल्कि एक युग थे। एक ऐसे युग जिसकी दरकार साहित्य और समाज दोनों को थी। साहित्य जहां मानवीय मूल्य की संभावनाएं तलाश रहा था वही समाज की पीड़ा ओहदे तक नहीं पहुंच पाती थी। ऐसे समय के बीच मुंशी प्रेमचन्द का आगमन होता है और हमारा साहित्य भी ठाकुर का कुआं, मंत्र, पूस की रात,बूढ़ी काकी, पंचपर्मेश्वर, ईदगाह,नामक का दरोगा, बड़े घर की बेटी और कफन जैसे विमर्शों से गूंज उठता है। यह कथा साहित्य मानवीय संवेदनाओं से भरे पड़े हैं। फिर सोजे वतन, गबन, सेवासदन, निर्मला, रंगभूमि, कर्मभूमि और गोदान जैसे उपन्यासों से साहित्य संवृद्घ हो उठता है।

प्रेमचन्द की दृष्टि सामाजिक विषमताओं और संवेदनशील पक्षों पर जगह जगह पड़ी है। प्रेमचन्द जीवन के उस चौराहे पर खड़े मिलते हैं जहां से सामाजिक, आर्थिक विषमताओं में समाज बंटा हुआ है। कहीं न कहीं प्रेमचन्द इस व्यवस्था से आहत थे और इस विषमता पर जगह जगह बरस कर हमें मनुष्य होने के लिए सचेष्ट करते हैं। उनकी कहानियों में भी ऐसे विमर्शों की भरमार है जो समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है। जैसे ठाकुर का कुआं में तत्कालीन वर्ण व्यवस्था के कुरूप पक्ष को उठाकर समाज को एक गंभीर और ज्वलंत विमर्श देते हैं। यह और बात है पूर्वाग्रह में उन्हें सामंतों का मुंशी घोषित कर दिया गया।

प्रेमचन्द को प्रेमचंद बनाने में परिस्थितियां भी काफी हद तक जिम्मेदार है। यह परिस्थितियां ही इन्हे, नवाब राय, धनपत राय, कलम के सिपाही, कलम के मजदूर, सामंतों के मुंशी बनाती गई। 1880 का दौर देश में काफी विषमताओं का दौर था। एक तरफ से अंग्रेजी हुकूमत तो दूसरी तरह से सामाजिक और आर्थिक विषमता कमजोर वर्ग पर दोहरा प्रहार कर रहा था। विवशता और लाचारी के अलावा उनका हिमायती कोई और नहीं था। ऐसे समय में प्रेमचन्द ने उनकी आवाज बनकर बाहरी और भीतरी गुलामी की तोड़ने का आग्रह किया। उन्होंने कफन में यह बताया की निर्धनता से बड़ी निर्लज्जता और कुछ नहीं। घिसू और माधव की यह संवेदनहीनता तर्क का नहीं संवेदनशीलता का विषय है। ये और बात है उन्हें सामंतों का मुंशी फिर भी घोषित कर दिया गया।

प्रेमचन्द की एक एक पंक्तियों में जीवन का एक रहस्य छिपा हुआ है। उन्होंने को लिख दिया वह अनादि काल तक के लिए विमर्श का विषय रहेगा। उनकी दृष्टि समाज के आखिरी पायदान पर खड़े व्यक्ति का हलफनामा है। उनकी रचनाओं में संवेदनशीलता और संवेदनहीनता के मध्य एक गंभीर विमर्श है। 'मंत्र' कहानी में डॉक्टर जहां संवेदनहीनता का प्रतिनिधि है वही वह बूढ़ा संवेदनशीलता का। उन्होंने यह बताया की धन दौलत से न कोई धनी होता है और न कोई गरीब। ह्रदय की विशालता ही उसे स्थापित करती है जो मूल्यों को पोषित करता है अपने भीतर।

पूस की एक रात किसानों की लाचारी और बेबसी को व्यक्ति करती एक कहानी है। जिसने संवेदनशीलता को इतनी परतें है जो किसानों के भाग्य में लिखी हुई रहती हैं। व्यवस्था कोई हो उसे उसी तरह जीना है। ईदगाह भी उनकी रचनाधर्मिता का एक अच्छा उदाहरण है।

---

* **गोरखपुर।**

नमक का दारोगा एक आदर्श नायक का चरित्र है। पंच परमेश्वर सामाजिकता के ताने बाने से बुना एक विमर्श है जिसे प्रेमचन्द ने बड़ी निष्पक्षता से व्यक्त किए हैं।

प्रेमचंद के उपन्यास और कहानियां भारतीय समाज का एक ऐसा आईना है जिसमें तत्कालीन सामाजिक विषमता पूरी तरह से दिख जाती है। कहानियों की विषय भूमि अलग ढंग से तैयार की जाती है। उसमें निहित संदेश समाज को दिशा देने वाला होता है। उनकी एक चर्चित कहानी ईदगाह इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ईदगाह कहानी सामान्य ढंग से तो पढ़ने पर लगता है कि बाल कहानी है और हामिद के समर्पण और त्याग की कहानी है। किंतु अगर उस कहानी के भीतर जाए, उस कहानी के तत्वों की तरफ दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि यह कहानी अपने समय में समाज के लिए एक बहुत बड़ी सीख ले कर आई है और प्रश्न भी खड़ा करती है। इस कहानी में जितना महत्वपूर्ण हामिद का इन तीन पैसों से दादी के लिए चिमटा खरीदने की बात रचनाकार लिखता है उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण यह है कि आज सामाजिक विषमता इस कदर व्याप्त है कि एक बच्चे से उसका बचपन छीन लिया है। यह गंभीर आरोप प्रेमचंद्र ने इस समाज पर लगाया है। हम यह मान सकते हैं कि जिस समाज में हम बच्चे को उसका बचपन नहीं दे सकते उसे समय से पूर्व परिपक्व बना देते हैं क्या वह समाज हमारे राष्ट्र के भविष्य का निर्माता इसी रूप में हो सकता है ? कदाचित सहज ढंग से यह संकल्पना सामाजिक संदर्भ में नहीं की जा सकती है। प्रेमचंद्र माननीय संबंधों के भी अत्यंत पारखी थे। उन्होंने अपनी कहानियों में मानवीय संबंधों के परत दर परत को बड़ी शालीनता के साथ उकेरा है उनकी एक चर्चित कहानी गिला है। यह कहानी बेमेल विवाह की कहानी है, जिसमें उन्होंने बताने का प्रयास किया है कि बेमेल विवाह से ही तमाम तरह की समाज में यौन विकृतियां फैलती हैं। नैतिक रूप से भ्रष्ट होने के पीछे नाजायज संबंध की आधारशिला कहे कहे बेमेल विवाह से रख दी जाती है और हमारा यह समाज पतन की ओर अग्रसर होने लगता है।

प्रेमचंद का संपूर्ण काव्य आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद से यथार्थोन्मुखी आदर्शवाद की तलाश है जिसमें प्रेमचन्द सफल हुए हैं। प्रेमचंद का साहित्य किसानों के जीवन के झंझावातों से गुजरता और उन्हें लिखता हुआ दिखाई देता है। 'गोदान' उनके रचनात्मक यात्रा का पड़ाव है। उनके समस्त साहित्यिक अवदानो का सार है। इस उपन्यास में प्रेमचन्द ने होरी, धनिया और गाय के सहारे जो समस्या उठाया है वह कृषक जीवन में आम है। ऐसा लगता है कि गाय की लिप्सा बस होरी और धनिया को नहीं बल्कि प्रेमचन्द को भी उतनी ही है। लगान और जमीदारी प्रथा का जो बिम्ब प्रेमचन्द ने गोदान में प्रस्तुत किया है वह किसानों की नियति है।

'जब दूसरों के पांव के तले गर्दन दबी हो टो उन्हें सहलाने में ही भलाई है।' किन्तु गोबर इसका प्रतिकार करता है। धनिया भी विद्रोह करना चाहती है किन्तु किसानी की चक्की ऐसी होती है जिसमें पीसना ही नियति है। होरी इसमें पिसता है लेकिन खुद को तसल्ली भी देता है कि

'मर्द तो साठे पर ही पाठे होते हैं' किन्तु धनिया उस तसल्ली पर भी असहमति जता देती है। 'जाकर सीसे में मुंह देखो। तुम जैसे मर्द साठे पर पाठे नहीं होते, दूध घी अंजन लगाने तक को मिलता नहीं, पाठे होंगे।'

यह सुनकर होरी जैसे गहरी तंद्रा से जग जाता है और बड़ी बेबसी में कहता है 'साठ तक पहुंचने की नौबत न आने पाएगी धनिया! इसके पहले ही चल देंगे।'

होरी कृषक समुदाय का अगुवा है। प्रेमचंद ने पात्रों को इतना सजीव बनाया है कि लगता है वह भारत का ऐसा किसान है जिसके हिस्से में बस लाचारी है। खेती कराना उसकी

नियति है। ऐसी नियति है जिसका परिणाम कुछ नहीं है। मिलना कुछ नहीं है किन्तु उसे तब भी लगता है कि 'खेती में जो मरजाद है वो नौकरी में कहां है'। पीढ़ी द्वंद को झेलता होरी धनिया के साथ अपने दिन काटता है। पूस की रात में हल्कू का मोह इस खेती से आखिर में भंग हो जाता है किन्तु होरी अंत तक उस खेती के मरजाद को ढोने की कोशिश करता है और दुखी होकर वह मजदूरी को चुनता है। अर्थात यह खेती जिससे सबका भोजन चलता है वह शुरू से हाशिए पर रखी गई व्यवस्था है। प्रेमचंद की पीड़ा निराधार नहीं है। हलकू और होरी की विवशता पूरे किसानों की विवशता है। किसान अभाव में कैसे जीता है और कितने दबाव में जीता है, यह प्रेमचंद्र ने हलकू और होरी के माध्यम से बिल्कुल सजीव ढंग से बताया है। किसानी में है कुछ नहीं सिवाय कर्ज और घुड़की सुनने के किंतु किसान अपने मरजाद को नहीं छोड़ना चाहता है। सबसे प्रमुख कारण इस पूरी व्यवस्था के ध्वस्त होने का प्रेमचन्द ने यह बताया है कि यह उपेक्षित परिवेश और कमजोर आर्थिक व्यवस्था का परिणाम है। ऊपर के ओहदे तक यह जीवंत पीड़ा नहीं पहुंच पाती।

यह होरी के ह्रदय की वास्तविक वेदना है जिसमें वो जी रहा है। यह गोदान के पहले पृष्ठ से ही प्रेमचंद ने बताना शुरू किया है। होरी उपन्यास का नायक है वह किसानों का प्रतिनिधि है। धर्म के ठेकेदारों, छोटे–बड़े महाजनों और जमीदारों के जाल में उलझा हुआ मर्यादा वादी किसान गिरते–गिरते मजदूर हो जाता है और पिसते पिसते शव। संक्षेप में यही उसका जीवन है। दूसरी ओर शब्द नागरिक समाज की स्थिति भी सामाजिक उत्थान के लिए आशाप्रद नहीं है जनता के सेवक कहलाने वाले पत्रकार स्वार्थी हैं वह अमीरों से चुपके चुपके रुपया खा लेते हैं। दार्शनिक दृष्टि वाले प्रोफेसर इस सीमा तक कटता है कि मजदूर की हड्डी तक महल खड़ा करते हैं गांवों और नगरों के बीच में किस संवत लटके हुए जमीदार किसानों को सुख पर अधिकारियों को संतुष्ट करते हैं। यही प्रेमचंद का युग जीवन है ऐसे समाज का उत्थान सुधारों से नहीं हो सकता। प्रेमचंद इस निष्कर्ष पर पहुंच गए हैं इसलिए उपन्यासकार नहीं सत्य को अनावृत कर देते हैं।

'धनिया यंत्र की भांति उठी, आज जो सुतली भेजी थी उसके बीच आने पैसे लाए और पति के ठंडे हाथ में रखकर सामने खड़े दातादीन से बोली –महाराज, घर में न गाए है न बछिया न पैसे हैं, यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है और पछाड़ खाकर गिर पड़ी।'

कदाचित उस महान कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद का संपूर्ण काव्य विश्व काव्य है।

संदर्भ–सूची :–

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य शुक्ल ,नवीनतम संस्करण ,कमल प्रकाशन नई दिल्ली 110002।
2. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास ,डॉ बच्चन सिंह, पहली आवृत्ति 2008 ,राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली।
3. हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ नगेंद्र और डॉ. हरदयाल, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, 47वां संस्करण।
4. आधुनिकता और हिंदी साहित्य, इंद्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1973।
5. आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास ,डॉ श्री कृष्णलाल ,हिंदी परिषद प्रयाग चतुर्थ संस्करण 1965।
6. प्रेमचंद और उनका युग , डॉ रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1988।
7. प्रेमचंद घर में, शिवरानी देवी, सरस्वती प्रेस बनारस।
8. प्रेमाश्रम, प्रेमचंद ,हंस प्रकाशन इलाहाबाद।
9. प्रेमचंद जीवन कला और कृतित्व, हंसराज रहबर, आत्माराम एंड संस दिल्ली 1962 ई।
10. हिंदी कथा साहित्य ,गंगा प्रसाद पांडे, भारतीय भंडार लीडर प्रेस इलाहाबाद ,प्रथम संस्करण 1951।
11. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास ,नवीन संशोधित संस्करण, डॉ बच्चन सिंह, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद।
12. प्रेमचंद की तेरह बाल कहानियां, संकलन हरिकृष्ण देवसरे, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत।

हिन्दी को समृद्ध बनाने में नागरी लिपि की भूमिका

डॉ. प्रज्ञा पाण्डेय *

देवनागरी लिपि का अंतिम संबंध ब्राह्मी लिपि से है। प्राचीन भारत में ब्राह्मी और खरोष्ठी दो लिपियों का प्रचार था। ब्राह्मी राष्ट्रीय लिपि थी जो बायीं ओर से दाहिनी ओर लिखी जाती है तथा खरोष्ठी लिपि(गधे की होठ वाली) फारसी लिपि की तरह दाहिनी ओर से बायीं ओर लिखी जाती थी। देवनागरी शब्द की व्युत्पत्ति 'नागर ब्राह्मण', 'नगर', 'देवनगर' से मानी जाती है। दक्षिण में संस्कृत की पुस्तकें नागरी लिपि में ही लिखी जाती हैं जो 'नन्दि नागरी' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

नागरी अंको का जन्म भी ब्राह्मी अंकों से माना जाता है। ईसा की पाँचवी शताब्दी में नागरी अंक–क्रम पर्याप्त विकसित था। उसका वही रूप आजकल प्रचलित है शून्य का आविष्कार भी भारत की देन है।

लिपि, राष्ट्र और संस्कृति परस्पर अनुपूरक हैं, कारण कि लिपि अपने राष्ट्र की सांस्कृतिक यात्रा की संवाहिका है। जहाँ तक देवनागरी लिपि का प्रश्न है, अन्यान्य लिपियों की तुलना में अधिक वैज्ञानिक इसलिए है कि यह एक ध्वन्यात्मक लिपि है। वैदिक काल से अद्यावधि चले आ रहे इसके स्वरूप में समय के अनुसार कुछ अनुकूलन अवश्य हुआ है, जो कि अपेक्षित भी है, परन्तु अधिकाधिक परिवर्तन असंभव है।

नागरी लिपि के कुछ ऐतिहासिक क्रम में 'माहेश्वरी ब्राह्मी रूप' इसे माहेश्वर शिव–प्रदत्त माना जाता है।'[1]

नृत्तावसाने नटराजराजे ननाद ढक्कां नवपंच बारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्वान् एतद्विमर्षे शिवसूत्र जालम्। काशिका (सूत्र1)

अर्थात नटराज भगवान शिव के चौदह नृत्यों के बाद इस शिवसूत्र–जाल की रचना हुई।

नागरी लिपि के संबन्ध में ओझा जी का मत है कि 'वर्तमान नागरी लिपि का मूल अर्थात प्राचीन रूप अशोक के शिलालेखों की लिपि में मिलता है, जो विक्रम संवत से लगभग 200 वर्ष पूर्व का है और काठियावाड़ से उड़ीसा तक और नेपाल की तराई से मैसूर तक अनेक स्थानों से मिला है। अतएव अभी तो अशोक के समय की लिपि को ही नागरी लिपि का प्राचीन रूप मानना चाहिए। अशोक के समय की लिपि का नाम 'ललितविस्तर' में ब्राह्मी मिलता है और 'नित्यषोडषिकार्णव' के भाष्य सेतुबंध में भास्करानंद ने उसका नाम नागर(नागरी)लिपि ही माना है,क्योंकि वे लिखते हैं कि 'नागरी लिपि' में 'ए' का रूप त्रिकोण है, जैसा कि अशोक के लेखों में मिलता है।'

प्राचीन देवनागरी का परिचय देते हुए ओझा जी लिखते हैं कि 'दसवीं शताब्दी की, उत्तरी भारतवर्ष की नागरी लिपि में कुटिल लिपि की ना, इ, अ, आ, ध, प, म, य, ष और स के सिरस्वर दो अंशों में विभक्त मिलते हैं। परन्तु ग्यारहवीं शताब्दी से ये दोनों अंश मिलकर स्वर की एक लकीर बन जाती है और प्रत्येक अक्षर का स्वर उतना लम्बा रहता है, जितनी कि अक्षर की चौड़ाई होती है, ग्यारहवीं शताब्दी की नागरी लिपि वर्तमान नागरी लिपि से मिलती–जुलती है और बारहवीं शताब्दी से वर्तमान नागरी बन गई है। केवल इ और स,घ में कहीं–कहीं पुरानापन

*** प्रवक्ता–हिंदी, रावर्ट्सगंज संस्कृत महाविद्यालय, रावर्ट्सगंज–सोनभद्र।**

नजर आता है। बारहवीं शताब्दी से लगातार अब तक नागरी लिपि बहुधा एक ही रूप में चली आती है, तो भी लेखन–शैली और देश–भेद से कुछ अंतर रह ही जाता है।'

आधुनिक नागरी दसवीं शताब्दी ई. की प्राचीन नागरी का ही विकसित रूप है।इसे वर्तमान रूप बारहवीं शताब्दी से प्राप्त हुआ।जिस प्रकार संस्कृत से हिन्दी के विकास के मध्य प्राकृत और अपभ्रंश के दो मुख्य सोपान हैं, उसी प्रकार ब्राह्मी से नागरी के विकास के मध्य भी गुप्त लिपि एवं कुटिल लिपि के दो मुख्य सोपान हैं।ऐसा प्रतीत होता है कि मानों भारतीय आर्य भाषा और भारतीय आर्य लिपि, दोनों का विकास साथ–साथ होता आया हो।

जहाँ तक नागरी के संज्ञा–औचित्य का प्रश्न है, इसके लिए अब तक देवनागरी, नागर, देवनागर, लोकनागरी आदि नाम सुझाये गये हैं।इन नामों से 'नागरी' नाम ज्यादा ख्यातिलब्ध है, जो कि देवनागरी का संक्षिप्त रूप है। इन नामानुक्रमों में आचार्य विनोबा भावे द्वारा प्रस्तावित 'लोकनागरी' संज्ञा कई कारणों से बहुत उपयुक्त है। जैसे– जब नागरी में सार्वदेशिक लिपि बनने की सामर्थ्य है, तो इसे 'देव' के साथ सीमित करके या 'नागरी' मात्र बनाकर रखने का कोई औचित्य नहीं है। जैसे 'संस्तुत' भाषा के लिए देव वाणी की संज्ञा देकर उसका वैशिष्ट्य निरुपित किया जाता है अथवा उस वर्ग विशेष के साथ जोड़कर देखा जाता है, ऐसा 'नागरी' लिपि के साथ करना उचित नहीं होगा। इसकी गुणगत–विशिष्टता को दृष्टि में रखकर 'लोकनागरी' संज्ञा से अभिहित करना उचित होगा। यद्यपि यह नाम ख्यात नहीं हो सका है, फिर भी संभव है कि यह 'नागरी' संज्ञा की तरह लोक प्रसिद्धि प्राप्त कर ले। कदाचित कुछ ऐसा ही सोचकर आचार्य ने यह नाम सुझाया हो।

जहाँ तक इसके देवनागरी अथवा नागरी नाम पढ़ने के कारणों का प्रश्न है, इस विषय में विद्वानों की अपनी दृष्टियाँ हैं। अगर विचार करके देखे, तो इसका जो लोकग्राह्य अर्थ–नागर तथा संभ्रांत–नागर में रहने वाला चतुर, श्रेष्ठ आदि की अर्थच्छाया से युक्त एक ऐसी लिपि, जो सर्वगुण सम्पन्न अथवा वैज्ञानिक हो, से है।

संपर्क–लिपि का स्थान प्राप्त करने के लिए नागरी में निम्नलिखित गुण का होना आवश्यक है

(1) सहजता

(2) उच्चारणानुरूप लेखन

(3) लेखन–सौकर्य

(4) लिपि में उपनिबद्ध साहित्य की समृद्धि

(5) लिपि क्रम की वैज्ञानिकता एवं वर्णमाला का व्यवस्थित अनुक्रम

उपनिर्दिष्ट संपर्क–लिपि की विशेषताओं के संदर्भ में नागरी लिपि का विवेचन करना समीचीन होगा।

(1)सहजता

नागरी लिपि अपनी सहजता और सरलता के कारण ही यह संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश जैसी प्राचीन भाषाओं और हिन्दी, मराठी आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं की लिपि रही है। इतना ही नहीं, नेपाली–जैसी विदेशी भाषा का भी लिपि होने का गौरव इसे अपनी सहजता के कारण ही मिला है और रोमन की तरह इसमें वाक्य का प्रथम अक्षर बड़े रूप में लिखने की अनिवार्यता नहीं है।

(2)उच्चारणानुरूप लेखन–

नागरी अक्षरात्मक लिपि है। अक्षरात्मक लिपि में प्रत्येक ध्वनि के लिए पृथक–पृथक स्वतंत्र वर्ण होते हैं । इसमें प्रत्येक स्वर वर्ण के लिए पृथक से मात्रा चिन्ह निश्चित होते हैं , जिनके प्रयोग के द्वारा स्वरयुक्त व्यंजनों अर्थात अक्षरों (सिलेबुल्स) को उच्चारणानुरूप लिपिबद्ध किया जा सकता है। जैसा कि अंग्रेजी में बट (but) और (put) की अव्यवस्था इस लिपि की भाषाओं में नहीं पायी जाती । जैसा कि डॉ. भोलानाथ तिवारी ने लिखा है– 'यदि हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं को रोमन या उर्दू में लिखना हो, तो अनेक ध्वनियों के लिए प्रायः दो लिपि चिन्हों को मिलाकर लिखने की परेशानी उठानी पड़ेगी, जबकि नागरी में उन सभी के लिए स्वतंत्र चिन्ह हैं । उदाहरण के लिए ख, प, द, झ, ठ आदि सभी महाप्राण ध्वनियों को रोमन के जी आदि में 'एच' मिलाकर तथा उर्दू में काफ, गाफ आदि में 'ह' को मिलाकर लिखते हैं। ऐसी स्थिति में इन लिपियों में एक ध्वनि के दो पढ़े जाने की आशंका बनी रहती है । Aghan 'अघन' भी है और 'अगहन' भी व उर्दू में भी यही स्थिति है । इसी प्रकार नागरी में लिखित 'आबहवा' को अभाव, अथवा आदि कई रूपों में पढ़ा जासकता है।' इन दुरूहताओं से मुक्त होकर नागरी पर्याप्त सम्पन्न और पूर्ण हो सकी है।

(3)लेखन सौकार्य– नागरी में ध्वनिग्रामों की पर्याप्त संख्या होनै से किसी शब्द को बिना किसी विशेष चिन्ह के लिखा जा सकता है । हाँ , अपवाद–स्वरूप कुछ शब्दों को छोड़कर । परंतु, रोमन में ऐसा लेखन–सौकार्य नहीं है। जैसे– यदि रोमन में हिन्दी के राम और टमाटर शब्दों को लिखना हो, तो इस प्रकार लिखेंगे–Rama] Tamatar यह लेखन की कठिनता नागरी के साथ नहीं है।

(4)नागरी में उपनिबद्ध साहित्य की समृद्धि–

नागरी लिपि में साहित्य उपनिबद्ध है। इस विषय में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात तो यह होगी कि अधिकांश भारतीय भाषाओं की जननी कही जाने वाली संस्कृत भाषा की भी यह सक्षम वाहिका है। इसे पाली, प्राकृत एवं अपभ्रंश आदि समृद्धशाली प्राचीन भाषाओं की लिपि होने का भी गौरव प्राप्त है। आधुनिक भाषाओं के संदर्भ में यह राष्ट्र भाषा हिन्दी या मराठी की लिपि है। इतना ही नहीं, देश की सीमा से बाहर में बोली जाने वाली नेपाली–जैसे विदेशी भाषा की भी लिपि नागरी ही है। इन सब भाषाओं में उपनिबद्ध ज्ञान–विज्ञान के तत्वों की जानकारी हेतु नागरी लिपि से परिचित होना होगा।

(5) लिपिक्रम की वैज्ञानिकता एवं वर्णमाला का व्यवस्थित अनुक्रम–

लिपिक्रम की वैज्ञानिकता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उदाहरण 'माहेश्वर सूत्र' है। इसे दो रूपों में देखा जा सकता है। इन सूत्रों में वर्णों को सुनियोजित क्रम से रखा गया है और प्रत्याहार की व्यवस्था की गई है।

अतः प्रत्याहार द्वारा कई अक्षरों का संकेत किया जा सकता है।

जैसे– 'इकोयणचि' इक् यण् अच'।

इक–ई, उ, ऋ, लृ। यण–य, व, र, ल।

अच–अ, इ, उ, ऋ, ल, ए, ओ, ऐ, औ।

इस संदर्भ में दूसरी बात यह है कि इसकी वर्णमाला वैज्ञानिक और क्रम सुनियोजित है। इसमें मुख्यतः दो तथ्य सामने रखे जा सकते हैं–

(क) उच्चारण–स्थान

(ख) उच्चारण–प्रयत्न

(क)उच्चारण–स्थान–

इसमें वर्णमाला के प्रत्येक कवर्ग, चवर्ग आदि को उच्चारण–स्थान की दृष्टि से व्यवस्था दी गई है। जो इस प्रकार है–

1. अट्ठारह प्रकार का (क) कवर्ग और क, ख, ग, घ, ड़, ह और विसर्गों का कण्ठ
2. इ अट्ठारह प्रकार का (च) चवर्ग च, छ, ज, झ, ञ और य तथा श का तालु स्थान
3. ऋ अट्ठारह प्रकार का (ट्) टवर्ग ट, ठ, ड, ढ, ण (रषाणाणाम्) र और ष का मूर्धन्य स्थान है।
4. तृ (त) तवर्ग त, थ, द, ध, न (लसाना) ल और स का दंत स्थान है।
5. उ अट्ठारह प्रकार का (पु) पवर्ग प, फ, ब, भ, म और उपध्यमानीय (प, फ) इनका ओष्ठ स्थान है।
6. ञ, म, ड़, ण, न इनका नासिक स्थान है और अपने–अपने वर्ग का स्थान भी है।
7. ए और ऐ का कण्ठ और तालु स्थान है।
8. ओ और औ का कण्ठ और ओंठ स्थान है।
9. वकार का दन्त और ओंठ का स्थान है।
10. जिह्वामूलीय (क) और (ख) का जिह्वा मूल स्थान है।
11. अनुस्वार का नासिका स्थान है।

(ख) उच्चारण–प्रयत्न–

इसी प्रकार से प्रयत्नों का भी क्रमिक विवेचन हुआ है। प्रयत्न दो प्रकार के हैं– आभ्यान्तर और बाह्य । उसमें पहला आभ्यान्तर पाँच प्रकार का है–

(1)स्पृष्ट
(2)ईषत्स्पृष्ट
(3)ईषदविवृत्त
(4) विवृत
(5)संवृत्त

बाह्य प्रयत्न ग्यारह प्रकार का है–

(1) विवार
(2)संचार
(3) स्वास
(4)नाद
(5) घोष
(6)अघोष
(7)अल्पप्राण
(8)महाप्राण
(9)उदात्त
(10)अनुदात्त
(11) स्वरित

इसके बाद प्रयत्नों का विस्तार भी दिया गया है। यहाँ उसे इस प्रकार रख सकते हैं–

प्रयत्न–ज्ञापक फलक

बाह्य प्रयत्न	विवार श्वास	विवार
अघोष	अल्काण	अघोष
अक्षर क, च, ट, त, प, ख, घ	थ,	फ ठ
श्वास	संवार	नाद घोष
महाप्राण	उदात्त	आनुदात्त
श	अ	इ
ष		उ

स क ए

लु

अल्पप्राण

स्वरित ए ओ औ

नागरी वर्णमाला के व्यवस्थित अनुक्रम के संदर्भ में संस्कृत के वर्णों पर दृष्टिपात करना समीचीन होगा। संस्तुत भाषा में भी सभी वर्ण सार्थक तथा व्याकृत हैं, अर्थात् प्रत्येक वर्ण या अक्षर का स्वंय अर्थ भी होता है। यह विशेषता केवल संस्कृत भाषा में ही है। 'भाषा और लिपि' के प्रसंग में आचार्य जी ने लिखा है– 'भारतीय वाक्शास्त्र की यह भी बड़ी विशेषता रही है कि संस्कृत भाषा में विभिन्न वर्णों या ध्वनियों के मेल से ही शब्द नहीं बनता, वरन् प्रत्येक वर्ण स्वतः भी शब्द है और वह एक वर्ण शब्द भी बहुवर्थक होता है। इस प्रकार संस्कृत या देववाणी के समस्त वर्णों का प्रादुर्भाव आध्यात्मिक माना जाता है। जिनके स्वरूप, अर्थ, गुण, दैवत और वर्ण सब निश्चित हैं, अर्थात् ये सब वर्ण भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र जाति के हैं, इनके अलग–अलग देवता हैं। वर्ण–निघंटु में अत्यंत विस्तार से प्रत्येक वर्ण के रूप और उसका आकृति विधान दिया गया है। इस प्रकार लिपि का शास्त्रीय और वैज्ञानिक विकास अन्य किसी देश में नहीं हुआ। इतना ही नहीं, भारतीय वैयाकरणों के उच्चारण–स्थान और प्रयत्न के अनुसार सब उच्चारित वर्णों को क्रमिक वर्गों में विभक्त करके उन्हें नियमबद्ध कर डाला, जिससे संस्कृत के वैयाकरणों को अत्यंत व्यवस्थित व्याकरण बनाने में बड़ी सुविधा हुई।'

नागरी के इन्हीं गुणों के कारण देश–विदेश के महापुरुषों, मनीषियों एवं चिंतकों ने इसकी वैज्ञानिकता की संपुष्टि की है–

(क)राहुल सांकृत्यायन के अनुसार, 'देवनागरी दुनिया की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि है।[2]'

(ख)आचार्य विनोबा भावे के अनुसार, 'नागरी लिपि' से बढ़कर वैज्ञानिक लिपि मैंने दुनिया में पायी नहीं।[3]

(ग)महावीर प्रसाद द्विवेदी के आनुसार, देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता स्वयं–सिद्ध है।[4],

(घ)जान क्राइस्ट के अनुसार,'मानव–मस्तिष्क से निकली हुई वर्णमालाओं में नागरी सबसे अधिक पूर्ण वर्णमाला है।[5],

नागरी लिपि संपर्क–लिपि के रूप में

सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं के संदर्भ में–

नागरी लिपि को संपूर्ण भारत की संपर्क–लिपि के रूप में स्वीकार करने की बात नई नहीं है। बंगाल के न्यायाधीश श्री शारदाचरण मित्र ने सर्वप्रथम एक लिपि विस्तार परिषद और देवनागरी पत्रिका के द्वारा एक राष्ट्रलिपि का आंदोलन चलाया था। उन्होंने सन् 1910 में प्रयाग में एक लिपि–सम्मेलन का आयोजन किया था, जिसके अध्यक्ष संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान न्यायाधीश श्री वी. कृष्णस्वामी अय्यर ने कहा था कि 'समस्त भारत के लिए एक भाषा और एक लिपि की नितांत आवश्यकता है। देवनागरी लिपि देशभर में प्रचलित और वैज्ञानिक है... इसलिए उसे देशभर की भाषाओं की लिपि के रूप में मान्य किया जा सकता है।' इसी प्रकार की घोषणा इसके पूर्व भी राजा राममोहन राय, तिलक, गाँधी, मालवीय, टंडन, भावे, कालेलकर ने की थी।

इन सब शुभ निर्देशों के बावजूद वैज्ञानिक आधार पर उन तत्त्वों की खोज आवश्यक है, इस संदर्भ में विचार करने पर निम्नलिखित बिंदु उभरते हैं–

(1)देवनागरी यद्यपि वैज्ञानिक लिपि है और इसमें ध्वनियों का बाहुल्य भी है, फिर भी यह देखना होगा कि भारतीय भाषाओं में ऐसी कौन–कौन सी और कितनी ध्वनियाँ हैं, जिनके लिए वर्तमान नागरी स्वतंत्र वर्ण उपलब्ध नहीं हैं।

(2)पृथक–पृथक भाषाओं के संदर्भ में विचार किया जा रहा है।

द्रविड़ भाषायें

भाषायें–देवनागरी में लिप्यंतरण हेतु अपेक्षित लिपियों क विकस अनुक्रम

मलयालम– 1. एँ के ओ को र ट्

2. ए ओ क् र ट्

तमिल– 1. न ए ओ क

2. ए ओ क न

तेलुगू– 1. अ आँ

2. ए ओ र च ज

कन्नड़– 1. एँ ओ

2. ए ओ

अन्य भारतीय भाषायें

मराठी– स्वतः नागरी लिपि हिन्दी–स्वतः नागरी लिपि

गुजराती	उड़िया	कश्मीरी सिंधी
पंजाबी	असमिया	
बंगला	उर्दू	

उपर्युक्त मीमांसा के अतिरिक्त इसी संदर्भ में आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी की दृष्टि इस प्रकार है–

मराठी, गुजराती, असमिया, बंगला, पंजाबी और उड़िया भाषाओं के लिपिग्राम देवनागरी के समान होने के कारण उनका अक्षरशः लिप्यंतरण उचित होगा।

तमिल, तेलगू, मलयालम, कन्नड़, कश्मीरी और सिंधी भाषाओं में देवनागरी से भिन्न जो ध्वनियाँ हैं, उनके लिए विशेष अक्षर–चिन्ह मान्य किये गये हैं।

व्यंजन	अक्षर रूप
1.कश्मीरी च वर्ग	च द ज झ
2.सिंधी भाषा के अंतःश्वसित व्यंजन	ग ज द ब

3.उर्दू की.विशिष्ट ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए तदनुरूप देवनागरी वर्ण के लिए नीचे बिन्दु लगाया जाये– क, ख, ज, फ।

इन दो तथ्यों से यह निष्कर्ष सामने आता है कि सम्पर्क लिपि के रूप में देवनागरी में अक्षरों का स्वरूप एवं अनुक्रम इस प्रकार होता है।

स्वर– अ, आ, ऑ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, लृ, पॅ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः ।

व्यंजन– क, ख, ग, घ, ङ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, क, ख, ग, ज, ट्र, ड़, फ, ट, ल, :।

इस रूप में देवनागरी को संपर्क–लिपि के रूप में अपनाने में भारतीय भाषाओं के अध्येताओं को सुविधा हो सकेगी। इस संदर्भ में कुछ विचार बिन्दु और भी हैं–

(1)जैसा की उत्तर भारत में देवनागरी का प्रयोग स्पष्ट ही है।

(2)दक्षिण–भारत के भी संस्कृत–हिन्दी पढ़ने वाले विद्वानों का परिचय नागरी लिपि से हो जाता है।

(3)गुजराती, पंजाबी और बंगला लिपियाँ भी देवनागरी के समान हैं।

इस प्रकार भारतीय भाषाओं के संदर्भ में देवनागरी लिपि को संपर्क–लिपि के रूप में अपनाने के लिए कोई विशेष असुविधा नहीं नजर आती।

नागरी लिपि संपर्क–लिपि के रूप में, समस्त विदेशी भाषाओं के संदर्भ में–

संसार भर की भाषाओं के संदर्भ में नागरी लिपि को संपर्क–लिपि के रूप में स्वीकार करने के लिए दिये जाने वाले तर्कों के पूर्व इस बिंदु पर विचार करना भी आवश्यक होगा कि समस्त विदेशी भाषाओं के लिए नागरी को संपर्क लिपि के रूप में प्रतिष्ठापित करने का औचित्य क्या है? इस औचित्य के पक्ष में जो तथ्य दिये जा रहे हैं, वे निम्न हैं–

(1)नागरी लिपि संसार की सभी लिपियों से अधिक वैज्ञानिक और व्यवस्थित है,साथ ही साथ इस लिपि में उपनिषद् साहित्य भी बहुत समृद्ध है। अब हम इन तीनों बिन्दुओं (क) वैज्ञानिक (ख) व्यवस्थित और (ग) लिपि में उपनिषद् साहित्य की समृद्धि के आधार पर इसके औचित्य की बात करेंगे।

(क) इसकी सबसे बड़ी वैज्ञानिकता यह है कि यह एक साथ वर्णात्मक और अक्षरात्मक दोनों है। जैसे क (वर्ण) और क (अक्षर–सेलेबुल्स) है। यह गुण संसार के किसी लिपि में नही मिलता।

(ख) इसे व्यवस्थित लिपि इसलिए कहा जा सकता है कि इसमें वर्णों को व्यवस्थित क्रम में रखा गया है और इसमें स्वरों की मात्राओं का वैज्ञानिक विधान है।

(ग)इस लिपि में उपनिबद्ध साहित्य भी बहुत समृद्ध है। इस उपनिबद्ध साहित्य में भी विशेषकर संस्कृत का संदर्भ संकेत्य है। क्योंकि ज्ञान–विज्ञान की किसी भी शाखा का सम्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए संस्कृत जैसी– समृद्धशाली भाषा का सम्यक ज्ञान करना आवश्यक होगा।भाषा विज्ञान के संदर्भ में यह स्पष्ट है कि संस्कृत भाषा के परिचय के साथ ही यूरोप में इस शास्त्र के अध्ययन का श्री गणेश हुआ।यह भी सर्वविदित है कि संस्कृत के ज्ञानार्जन हेतु यूरोप के भाषाशास्त्रियों, दार्शनिकों एवं चिंतकों ने अथक श्रम किया है।इस संदर्भ में यह उल्लेख्य होगा कि संस्कृत की भी लिपि नागरी ही है।

अतः नागरी को संसार की भाषाओं के संदर्भ में सम्पर्क लिपि के रूप में स्वीकार कर लेने पर संस्कृत के ज्ञानार्जन हेतु लिपि–संबंधी ज्ञान की समस्या नहीं रहेगी।इस संदर्भ में संसार की वाग्ध्वनियों की संख्या आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ने इस प्रकार प्रस्तुत की–

अंग्रेजी	26	हिब्रू	22, 41	इतालवी	20
फ्रांसीसी	23	यूनानी	24	तातारी	202
अरबी	28	लातिन	22	ब्राह्मी	16
फारसी	31	डच(हुलांशा)	26	चीनी लगभग	80,000
तुर्की	33	स्पेनी	27		

इस प्रकार संसार की मुख्य भाषाओं की वाग्ध्वनियों को दृष्टिगत रखते हुए कहा जा सकता है कि देवनागरी में लिपि चिन्हों का प्रयोग कर संसार की सभी भाषाओं एवं अंग्रेजी के भी वर्णों का निर्धारण किया जा सकता है।

अंतर्राष्ट्रीय ध्वनिपरिषद की वर्ण–तालिका (आई.पी.ए. चार्ट) के हिन्दी संस्करण का अवलोकन करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसे रोमन की अपेक्षा नागरी में अधिक सरलता से प्रस्तुत किया जा सकता है। भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं के लिए नागरी को संपर्क लिपि के रूप में अपनाये जा सकने के संदर्भ में प्रस्तुत किये तथ्यों से एवं विशेषज्ञों की अभिव्यक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि नागरी में संपर्क–लिपि बनने की पूर्ण क्षमता है।

संदर्भ–सूची :–

1. एल. एस. वाकणकर–गणेश–विद्या,1968, पृ. 5।
2. वही, पृ. 5
3. वही, पृ. 8
4. अनुसंधित्सु का यह शोध निबंध नागरी लिपि परिषद पत्रिका अंक 25–26, 27मार्च,1981 में प्रकाशित हुआ था। इसे यहाँ अविकल रूप में दिया जा रहा है।
5. अनुसंधित्सु द्वारा देवनागरी संस्थान बदायूँ द्वारा आयोजित त्रि–दिवसीय लिपि सम्मेलन पढ़ा गया शोध–पत्र।

'अभ्युदय' के वस्तु-विन्यास का समय और संदर्भ

कीर्ति त्रिपाठी*

नरेन्द्र कोहली एक पौराणिक उपन्यासकार हैं। जिन्होंने पौराणिक कथाओं को नये कलेवर में ढालकर प्रस्तुत किया है। कुछ लोगों ने कोहली जी के ऊपर पिष्टपेषण का अरोप लगाया हैं। परन्तु कोहली जी ने जो भी पौराणिक रचनाएं की है, वह पिष्टपेषण नहीं अपितु सर्वथा मौलिक है। कोहली जी ने अपनी कथा के वस्तुविन्यास को इस तरह से विन्यस्त किया है कि कोई भी पाठक पढ़ते समय इससे आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकता है।

कहा जाता है कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य में जो द्वार खोला उसे नरेन्द्र कोहली ने युग जैसा विस्तार किया। परम्परागत विचारधारा एवं चरित्र चित्रण से प्रभावित हुए बिना स्पष्ट एवं सुचिंतित तर्क के आग्रह पर मौलिक दृष्टि से सोच सकना, साहित्यिक तथ्यों विशेषतः ऐतिहासिक, पौराणिक तथ्यों का मौलिक वैज्ञानिक विश्लेषण, यह वह विशेषता है जिसकी नींव आचार्य द्विवेदी ने डाली थी और उस पर रामकथा, महाभारत कथा एवं कृष्णकथाओं आदि के भव्य महल खण्ड करने का श्रेय आचार्य नरेन्द्र कोहली को जाता है। भारतीय संस्कृति के मूल स्वर आचार्य द्विवेदी के साहित्य में प्रतिध्वनित हुए और उनकी अनुगूँज नरेन्द्र कोहली में प्रतिफलित हुई।

'अभ्युदय' नरेन्द्र कोहली द्वारा रचित एक महाकाव्यात्मक उपन्यास है। इसकी रचना कोहली जी ने सर्वप्रथम 'दीक्षा', 'अवसर संघर्ष की ओर' 'युद्ध'–1 व 'युद्ध'–2 के रूप में की थी। तत्पश्चात् इसे समग्र रूप से 'अभ्युदय' नाम से संकलित किया। 'अभ्युदय' परम्परा और नवीनता का अद्भुत संगम है। इसे पढ़कर पाठक अनुभव करेगा की वह पहली बार ऐसी रामकथा पढ़ रहा है, जो सामयिक, लौकिक, तर्कसंगत तथा प्रासंगिक भी है। यह किसी अपरिचित और अद्भुत देश काल की कथा नहीं है। यह इसी काल और लोक की, आपके जीवन से संबंधित समस्याओं पर केन्द्रित एक ऐसी कथा है, जो सार्वकालिक और शाश्वत है। प्रत्येक युग के व्यक्ति का इसके साथ पूर्ण तादात्म्य होता है। 'अभ्युदय' प्रख्यात कथा पर आधृत अवश्य है : किन्तु यह सर्वथा मौलिक उपन्यास है, जिसमें न कुछ अलौकिक है न अतिप्राकृतिक। यह आपके जीवन और समाज का दर्पण है। अभ्युदय की विशेषता यह है कि लेखक ने एक पौराणिक कथा को यथार्थवादी वातावरण प्रदान किया है। इस अभिनव प्रयास में कोहली जी को अभूतपूर्व सफलता मिली है। प्रख्यात तथ्यों को नवीन तथा तार्किक रूप देने के लिए उन्होंने कल्पना के तथ्य जोड़े हैं और यह वास्तविक तथ्य के साथ कैसे संगति बैठाते हैं इसमें लेखक की औपन्यासिक शिल्प की महारथता प्रदर्शित होता है।

महैश दर्पण से हुई वार्ता का अंश दृष्टव्य है– ''मुझे अगर कुछ नया नहीं जोड़ना था तो फिर रामकथा को नये सिरे से लिखने की जरूरत ही क्या थी।''[1] अर्थात् कोहली जी परम्परागत रामकथा को कल्पना के रंग से रंगकर नवीन रूप सायास प्रस्तुत किया है। 'अभ्युदय' का पहला खण्ड दीक्षा है जिसे पढ़ते समय पता चलता है कि परम्परागत तथ्यों को नये संदर्भ में लिखकर उसमें काल्पनिक तथ्य जोड़कर कथा को आज के सजग पाठक के लिए विश्वसनीय बनाने के साथ–साथ रोचक भी बना दिया गया है एवं अपने युग की समस्याओं को प्राचीन व पौराणिक कथा के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

---

* **शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।**

''दीक्षा उपन्यास लिखते समय मेरे मन में अपना वर्तमान था एक प्रख्यात कथा का ढाँचा था उसका सौन्दर्य था, उसके कथानक की असंगतियाँ थी, उसके चमत्कार तथा अलौकिकता थी। मैं उपन्यास लिख रहा था उपन्यास अर्थात् अपने युग की समस्याओं को अपने युग के लोगों तक अपनी टिप्पणियों के साथ पहुँचाने का प्रयत्न। उस कथा की घटनाओं चरित्रों को समकालीन मनोविज्ञान चिन्तन तथा संस्कृति में ढालना था। मेरा मन इस बात को स्वीकार नहीं करता की दशरथ को कोई संतान नहीं थी, इसलिए अनेक विवाह किए, पुत्रेष्टि यज्ञ से चार पुत्र प्राप्त किए। मैं ये भी नहीं मान सकता कि राम–लक्ष्मण बिना किसी योजना के जनकपुर पहुँच गये और संयोग से सीता का विवाह हो गया। चारों भाइयों के विवादित होने का भी कहीं कोई आधार मुझे नहीं मिला। अहल्या का पत्थर हो जाना और राम की चरण धूलि का स्पर्श के पुनः युवती हो जाना इत्यादि बातें भी मैं कभी स्वीकार नहीं कर सका।[2]''

इन्हीं विचारों को लेकर कोहली जी ने 'दीक्षा' उपन्यास की कथा का ताना–बाना बुना। विश्वामित्र को बुद्धिवादी चिन्तक की भूमिका दी गई है जो राष्ट्र में फैलते हुए अन्याय पूर्ण राक्षसी साम्राज्य व उनके आतंक से चिंतित भी है तथा उनका आतंक खत्म हो इसके लिए उन्हें सक्रिय और जागरूक बताया गया है। कथावस्तु में नवीनता आरम्भ में ही है जैसे लेखक कथा का शुभारम्भ पुत्रेष्टि यज्ञ से न करके विश्वामित्र के आश्रम से करते हैं। रामकथा का प्रख्यात तथ्य तो यह है कि विश्वामित्र राम–लक्ष्मण को राक्षसों के नाश हैतु दशरथ से मांग कर लाते हैं किन्तु कथा में लेखक ने यह नवीनता लाई है कि राक्षसों के आतंक के पीछे उनके अपने साम्राज्य के विकास का उद्देश्य था, जिसे वे बहुत योजनाबद्ध तरीके से पूरा करते हैं। विश्वामित्र इस योजना से परिचित हैं, इसलिए वे राम को दशरथ से मांगकर लाते हैं। उन्हें दीक्षित करते हैं। कोहली जी उपन्यास में राम के चरित्र और कार्यों का तत्कालीन सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करना चाहते थे इसीलिए प्रख्यात कथा मैं व्याप्त अलौकिकता को हटा उसे विश्वसनीय और वैज्ञानिक रूप दिया है। कथा के प्रसंगों की ऐसी विवेचना की कि उनका औचित्य पाठकों को समझ आ जाए और घटनाओं की मनोवैज्ञानिकता, यथार्थता भी बनी रही।

दीक्षा उपन्यास की दूसरी प्रमुख व प्रख्यात घटना है अहल्या का शापवश पत्थर हो जाना। कोहली जी ने इस प्रख्यात तथ्य में कल्पना व मनोवैज्ञानिक सूझ–बूझ द्वारा अहल्या के पाषाण बन जाने वाले प्रसंग को प्रतीक रूप में लिया। अन्याय का शिकार और समाज द्वारा उपेक्षित व प्रताड़ित होकर अहल्या जड़ सी हो गयी, यह तर्क अधिक सार्थक और विश्वसनीय लगता है। इसी तरह राम–सीता विवाह को भी अवतार से परे हटकर राजनैतिक गठबंधन व दो सुदृढ़ राष्ट्रों के मिलने का रूप देकर चित्रित किया जिसमें आर्यावर्त में छिट–पुट व छोटे बड़े राज्य इन बड़े राज्यों में मिलकर संगठित होकर मजबूत व सुदृढ़ हो सके। कथा संगति के साथ उपन्यास 'दीक्षा' के परिवेश में भी नवीन तथ्यों का संयोजन किया गया है। लेखक द्वारा मुख्य परिवर्तन से स्पष्ट होता है कि अति प्राचीन व पौराणिक कथा होकर भी यह आधुनिक समस्याओं को चित्रित करती है– जैसे–शासन तंत्र में भ्रष्टाचारिता का होना, आपराधिक तत्वों से उत्कोच ले उन्हें अपराध के लिए बढ़ावा देना, स्त्रियों के साथ अन्याय चाहै वह किसी भी वर्ग से सम्बन्ध रखती हों। लेखक ने उपन्यास का आरम्भ अत्याचार के विवरण से किया और अन्त इन अत्याचारों में फंसी युवतियों के उद्धार से। जिस प्रसंगों ने कोहली जी को अपनी ओर आकृष्ट किया था उनका पुनः सृजन दीक्ष उपन्यास में हुआ है। कौशल्या के माध्यम से ऐसी स्त्री का चित्र खींचा गया जो पति की

उपेक्षा सहन करके भी घर व राज्य की मर्यादा को बनाए रखने में संलग्न है। इसी तरह जनक के महल में अज्ञातकुल–शील सीता की मनोव्यवस्था का उद्घाटन; जो समाज द्वारा प्रताड़ित व उपेक्षित रहती हैं। जिस कन्या को राजा का संरक्षण मिलता है उसे भी समाज उचित सम्मान नहीं दे पाता। आधुनिक पाठक, मुक्त कंठ से इन तथ्यों को स्वीकार करता है।

अभ्युदय का दूसरा खण्ड 'अवसर' है जिसमें भी कोहली जी ने नवीन कथा का विन्यास किया है। प्रख्यात कथा में वर्णित है कि दशरथ किसी ज्योतिष योग के कारण राम का अभिषेक करने को उत्सुक होते हैं और देवतागण राम के अभिषेक से खुश नहीं होते। अतः वे सरस्वती की मदद लेकर कैकेयी की मति को भ्रष्ट करते हैं। तब वह राम के लिए वनवास और भरत के लिए राज्य माँगती है। जबकि कोहली जी ने इसमें तात्कालिक राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करते हुए यह दिखलाया की दशरथ अपनी रक्षा का दायित्व केवल राम पर सौंपकर निश्चिंत हो सकते थे। ऐसा सोचकर दशरथ गुप्त रूप से राम के अभिषेक की तैयारी कर रहै हैं। कोहली जी ने दशरथ को अपनी पत्नी कैकेयी, उसके भाई युद्धजित व पुत्र भरत से भयभीत बताया है। इसी चित्रण द्वारा राम व कैकेयी के सम्बन्धों की भी नयी व्याख्या की है। कोहली जी ने कैकेयी को दोषमुक्त कर चित्रित किया है। दशरथ के अविश्वास के कारण कैकेयी ऐसा व्यवहार करने के लिए बाध्य होती है। प्रख्यात कथा में चारों भाइयों का विवाह एक साथ माना गया है जबकि कोहली जी ऐसा नहीं मानते उन्होंने लक्ष्मण को अविवाहित माना है। वनवास काल में लक्ष्मण को रात में सोते हुए भी चित्रित किया है। प्रख्यात कथा में राम के एक वर्ष तक चित्रकूट में रहने के विषय में कोई कारण नहीं बताया गया है किन्तु कोहली जो इसके पीछे राम का अयोध्या नगरी व अपनी माताओं की रक्षा की आशंका बताया है। वे भरत के विचारों को जानना भी चाहते थे। राम चित्रकूट में रहकर अयोध्या की गतिविधियों पर नज़र रखना चाहते थे। ऋषियों को जागरूक चिंत के रूप में चित्रित किया गया है जो अपने हवन यज्ञ में तल्लिन नहीं रहते अपितु अपने आस–पास के परिवेश से भली–भाँति परिचित हैं। परिवेश चित्रण में भी नवीनता हैतु अयोध्या की राजनीति को अभिनव रूप से प्रस्तुत कर दशरथ को समकालीन सत्ता का लोभी शासक के रूप में चित्रित किया है। अयोध्या के राजनैतिक कलह के साथ–साथ अन्तःपुर के क्लेष का भी चित्रण विस्तार से किया गया है।

अभ्युदय का तीसरा खण्ड 'संघर्ष की ओर' है जिसके अन्तर्गत प्रख्यात रामकथा के अरण्यकाण्ड की कथा का चित्रण है। प्रख्यात कथा में ऋषि शरभंग को आत्मदाह करने का चित्रण है लेकिन इसके पीछे कोई तर्क नहीं दिया गया है। केवल यह लिख दिया गया है कि ऋषि अग्नि समाधि लेने जाते हैं। कोहली जी ने इसे अग्नि समाधि न मान आत्मदाह के रूप में चित्रित किया है तथा तर्क यह बताया है कि ऋषि शरभंग जब वन में पिछड़ी जन जाति के उत्थान में असमर्थ होते हैं तब अपने जीवन को असफल और व्यर्थ समझ आत्मदाह करते हैं। दण्डक वन में ऋषियों के अलावा लेखक ने वन्य जन जातियों का उनके जीवन स्तर, उनके जीविकोपार्जन आदि के विवरण में कल्पना का संयोजन किया है। खान, श्रमिकों के साथ–साथ खेतिहर मजदूरों का भी चित्रण किया गया है। प्रस्तुत प्रसगों के वर्णन द्वारा एक शाश्वत सामाजिक समस्या की प्रस्तुति की गयी है। सीता हरण के सन्दर्भ में प्रख्यात कथा में वर्णित है कि सीता स्वर्ण मृग को देख प्रभावित होती है। कोहली ने इस संदर्भ को मारीच के द्वारा सोने के बने मृग छाल को देखा सीता प्रभावित होती है। सीता हरण के समय आश्रम में सीता अकेली नहीं थी बल्कि मुखर नामक काल्पनिक पात्र था। कथा में कोहली जी ने वानर, भालू जटायू आदि को जानवर व पक्षी के रूप में नहीं अपितु वन–जाति

के रूप में चित्रित किया है। जटायु को गोरिल्ला योद्धा के रूप में चित्रित किया है। राम को जन जातियों को शिक्षित व आर्थिक रूप से सुदृढ़ करते हुए बताया है। शूर्पणखा के माध्यम से विलासमय जीवन का चित्रण किया गया है। लेखक ने शूपर्णखा को विलासी व कामुक के साथ–साथ ईष्यालु भी चित्रित किया है। जिससे यह प्रख्यात कथा से अलग दिखाई पड़ती है। वह रावण को सीता हरण के लिए उकसाती है। लंका में गृह कलह के साथ–साथ राजनैतिक कलह भी करवाती है। पूरा वर्णन उसकी कुटिल राजनीतिक चालों की व्याख्या करता है।

अभ्युदय का अन्तिम खण्ड 'युद्ध' है। यह उपन्यास दो भागों में विभाजित है। इसके अन्तर्गत किष्किन्धा काण्ड, लंका काण्ड व सुन्दर काण्ड की कथा समाहित है। प्रस्तुत उपन्यास के संदर्भ में कोहली जी ने कहा है– "मेरे लिए यह प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण था कि राम, सुग्रीव, तथा विभीषण की मैत्री का आधार क्या था? राम ने बाली से मित्रता क्यों नहीं की? सुग्रीव और विभीषण ने अपने भाइयों के विरूद्ध राम का साथ क्यों दिया? अंगद और तारा को सुग्रीव व राम के विरूद्ध शिकायत क्यों नहीं थी? इन्हीं से संबंधित प्रश्नों का समाधान ढूढ़ने का प्रयत्न मैंने अपने इस उपन्यास के दोनों भागों में किया है।"[2] प्रख्यात कथाओं में वर्णित है कि बाली–सुग्रीव में वैचारिक मतभेद है उनके विचारों में भिन्नता के कारण है। जबकि कोहली जी ने राजनैतिक दाँव–पेच, सत्ता का दुरूपयोग, आम नागरिक के दुःख दर्द से बेखबर होना, शासक का क्रुर व उदासीन होना चित्रित किया है। बाली व सुग्रीव के राजनैतिक, मतभेदों की स्थितियों को इस प्रकार चित्रित किया गया है जैसे शीत युद्ध चल रहा हो। सीता हरण के पश्चात् राम की मनःस्थिति, उनके चिंतन का चित्रण भी नवीनता के साथ किया गया है। राम और सुग्रीव की मैत्री का वर्णन भी नवीनतापूर्वक किया गया है। सीता संधान के विषय में भी नवीनता का वर्णन है। प्रख्यात कथा में अंगद दल पूर्ण रूप से राम से प्रभावित है। वे भक्ति के प्रभाव से सीता का संधान करता है, जबकि कोहली जी ने अंगद के नेतृत्व में जो दल भेजा उनका चित्रण शुद्ध मानवीय स्तर पर किया है। वे कठिनाइयों से उबते हुए चित्रित है। सागर संतरण के संबंध में भी नवीनता का चित्रण है। कोहली जी ने हनुमान को सागर तैर कर पार करते हुए चित्रित किया है। सागर पार करने के संदर्भ में प्रख्यात कथा में वर्णित है कि राम सागर से विनय करते है कि उन्हें मार्ग दे। उनके विनय को सागर अनसुना करता है तब राम क्रोधित होकर बाण द्वारा सागर को जल विहीन करने के लिए तैयार होते है, जबकि लेखक ने सागर से विनय का अर्थ सागर तट पर रहने वाले राक्षस, व्यापारी वर्ग से जलपोत मागने के विनय के रूप में चित्रित किया है।

इस प्रकार नरेन्द्र कोहली जी ने परम्परा से चली आती प्रख्यात राम कथा में अपनी सूझ–बूझ के साथ मौलिकता का समावेश कर इसे एक नया आयाम प्रदान किया है। उनका उपन्यास परम्परा का पिष्टपेषण नहीं बल्कि पुनः सृजन है, जो अपने में सामाजिक, राजनैतिक समस्याओं को समाहित किए हुए है। कोहली जी की रामकथा ने उपन्यास साहित्य में रामकथा को एक नयी दृष्टि से देखने का मार्ग प्रशस्त किया है। अतः उनकी रामकथा सर्वथा मौलिक और मानवीय धरातल पर चित्रित कथा है।

सन्दर्भ–सूची :–

1. *व्यक्तित्व एवं कृतित्व बातचीत– नरेन्द्र कोहली, पराग प्रकाशन, पृ0 14।*
2. *व्यक्तित्व एवं कृतित्व मैं और मेरा लेखन, पराग प्रकाशन, पृ0 14।*

ꙮ★ꙮ

ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रशासन और डॉ. आंबेडकर की दृष्टि

डॉ. शोभा कौर*

भारत कितना समृद्ध था और कैसे वह आज एक कर्जदार देश के रूप में वर्तमान दुर्गति तक पंहुचा, यह जाने की जिज्ञासा डॉ अम्बेडकर के अर्थशास्त्रीय अनुसन्धान कार्यों के पुनः अध्ययन की ओर प्रेरित करती है। डॉ अम्बेडकर भारत के उन यशस्वी अर्थशास्त्रियों में से एक हैं, जिन्होंने अंग्रेजो के गढ़ में घुस कर उनके अन्यायी कार्यों को उजागर करने का जोखिमभरा कार्य किया। डॉ अंबेडकर एक राजनेता और समाज सुधारक ही नहीं एक विचारशील विद्वान् और प्रसिद्ध अर्थशास्त्री भी थे। अर्थशास्त्र अंबेडकर का सर्वाधिक प्रिय विषय था। कोलंबिया विश्वविद्यालय में अध्ययन करते समय उनके पास कई विषय थे जिनका सीधा संबंध अर्थशास्त्र से था। वहां से उन्होंने 'इवोल्यूशन ऑफ पब्लिक फाइनेंस इन ब्रिटिश इंडिया' विषय में पीएचडी की डिग्री प्राप्त की थी। आगे चलकर लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में उन्होंने प्रॉब्लम 'ऑफ रुपया इट्स ओरिजिनल एंड इट्स सॉल्यूशन 'विषय पर डी.एस.सी. की डिग्री हेतु शोध प्रबंध लिखा। उस ग्रंथ की भूमिका महान अर्थशास्त्री एडविन केनन ने लिखी थी। अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उनकी विद्वता का अनुमान लगाने के लिए अमर्त्य सेन की टिप्पणी भी मददगार हो सकती है। 2007 में दिए गए एक व्याख्यान में अर्थशास्त्र के क्षेत्र में डॉ आंबेडकर की गुरुता को स्वीकारते हुए हमारे समय के इस महान अर्थशास्त्री ने कहा था, 'अंबेडकर अर्थशास्त्र के क्षेत्र में मेरे जनक हैं। वे दलितों शोषितों के सच्चे और जाने–माने महा नायक हैं। उन्हें आज तक जो भी मान सम्मान मिला है वह उससे कहीं ज्यादा के अधिकारी हैं।.... अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उनका योगदान बेहद शानदार है उसके लिए उन्हें सदैव याद रखा जाएगा।'[1]

20 वीं सदी के आरम्भ में भारत का आर्थिक इतिहास तो लिखा जा रहा था, पर भारत पर शासन कर चुकी ईस्ट इंडिया कंपनी के अर्थतंत्र को डॉ. आंबेडकर ने व्यवस्थित ढंग से पहली बार प्रस्तुत किया। वे ईस्ट इंडिया कंपनी की आंतरिक राजनीति की बात नहीं करते अपितु वह वित्त प्रबंधन के ढांचे पर विचार करते हैं। उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के अर्थतंत्र का वर्णन करते हुए उनकी व्यवस्था, राजस्व का स्वरुप– भू–राजस्व, राजस्व का स्वरुप–कर, खर्च एवं राजस्व का प्रभाव, ऋण का स्वरुप और 1858 के अधिनियम के विषय में विस्तार से बताया है।

व्यवस्था के अंतर्गत वे बताते हैं कि चार प्रकार के कोर्ट थे– 1. स्वामी मंडल कोर्ट 2. निदेशक मंडल कोर्ट 3. समितियां 4. नियन्त्रण बोर्ड। स्वामी मंडल, निदेशक मंडल और समितियों के माध्यम से डॉ. आंबेडकर ने ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रशासनिक ढांचे को प्रस्तुत किया है। जिसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि अधिकार और मत का सर्वाधिकार धन के अनुपात के आधार पर तय किया जाता था। जैसे 500 पौंड स्टॉक का मालिक कोर्ट में स्थान ग्रहण करने के पात्र था। 1,000 पौंड स्टॉक का मालिक कोर्ट में एक मत डालने का पात्र था। 3,000 पौंड स्टॉक का मालिक कोर्ट में दो मत डालने का पात्र था। 6,000 पौंड स्टॉक का मालिक कोर्ट में तीन मत डालने का पात्र था। 10,000 से 1,00,000 तथा अधिक पौंड की राशि के स्टॉक का मालिक कोर्ट में चार मत डालने का पात्र था। मूलतः धन के आधार पर मताधिकार कोर्ट में प्राप्त था। इसके अतिरिक्त बहुत सी समितियां थीं–जैसे–गुप्त समिति, पत्राचार समिति, कोष समिति, सरकारी लश्कर तथा भण्डार समिति, वैधानिक

*** असिस्टेंट प्रोफेसर, किरोड़ीमल महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।**

कार्यवाई समिति, सैनिक कार्यवाई समिति, लेखा समिति, क्रय समिति, मालगोदाम (भण्डारण) समिति, इंडिया हाउस समिति, पोत (परिवहन) समिति। 2

भारत में स्थानीय प्रशासन कुछ प्रेसिडेंसी में बंटा हुआ था। मसलन–बंगाल प्रेसिडेंसी(गवर्नर), मद्रास प्रेसिडेंसी (गवर्नर जनरल), बम्बई प्रेसिडेंसी (गवर्नर जनरल)। सर्वोच्च राजनीतिक प्रभु सत्ता और उसकी वित्तीय व्यवस्था इस रूप में चल रही थी कि राजनीतिक एवं व्यापारिक गतिविधियाँ एक साथ जारी रखीं थीं और व्यापारिक एवं राजस्व वसूली को परस्पर मिला दिया गया था। राजस्व का स्वरुप भू–राजस्व अर्थात् (मालगुजारी) पर निर्भर था। इस सन्दर्भ में कार्नवालिस की जमींदारी व्यवस्था–स्थायी बंदोबस्त कहलाती है। आंबेडकर जी बताते है, ग्राम मालगुजारी पद्धति दो तरीके से परिचालित थी– रैयतवारी प्रथा और ग्राम मालगुजारी प्रथा। गाँव का प्रशासन ग्रामीण जनता द्वारा चुने गए मुखिया को सौंपा जाता था। भूमि का कुछ भाग और उसका कुछ अधिकार गाँव के विभिन्न कारीगरों व शिल्पकारों जैसे विद्यालय अध्यापक, धोबी, नाई, बढ़ई, लोहार, चौकीदार,गाँव के मुनीम आदि को दिया जाता है और प्रत्येक समुदाय के लोग इससे प्राप्त लाभ का जन कल्याण में खर्च करते थे। ये ग्रामीण समुदाय लघु गणतंत्र सदृश्य थे। गाँव की इच्छा के बिना सरकार उनकी उनकी सम्पत्ति के बारे में जांच और इसकी जानकारी प्राप्त नहीं कर पाती थी। गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को कितनी राशि का भुगतान करना है इसका निर्धारण करना उनका आंतरिक मामला है, जिसका निर्णय गाँव की सम्पन्नता पर भी निर्भर था, इसमें सरकार का हस्तक्षेप अवांछनीय है।

डॉ अम्बेडकर जी ब्रिटिश शासन में प्रचलित कर प्रणाली के विषय में बताते हैं–अनेक प्रकार की कर प्रणाली विकसित थी–नमक प्रथा, चुंगी (सीमा शुल्क), नमक और अफीम स्प्रिट और शराब, पहिया कर, सेयर शुल्क, न्यायिक प्रभार, स्टाम्प शुल्क, टकसाल राजस्व, जहाज रानी राजस्व, देशी राज्यों से मदद अनेक स्तरों पर मिलती थी। 2 इसमें विभिन्न प्रकार के कर सम्मिलित थे– भूमि कर, अफीम राजस्व, नमक कर, सीमा शुल्क राजस्व, विविध राजस्व, खर्च, लोकनिर्माण, नहरें, ट्रकों के लिए सडकें, रेलवे लाइनें, इलैक्ट्रिक टेलीग्राफ आदि राजस्व का प्रभाव (दबाव)कितना खतरनाक था ,इस सन्दर्भ में अंग्रेज अधिकारी के मत से स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है–

विशप हेबर ने ब्रिटिश भारत तथा देशी राज्यों (रजवाड़ों)की यात्रा करने के बाद 1826 में लिखा कि– "भारत में इस समय विद्यमान शासक इतना किराया नहीं मांगता जितना हम वसूल करते हैं।"[3]

भारत में इस समय विद्यमान भूमि–कर के विषय में 1830 में कर्नल ब्रिग्स ने लिखा– "भू स्वामी के सम्पूर्ण कर को आत्मसात घोषित करने की बात के बारे में यूरोप व एशिया की किसी सरकार को जानकारी नहीं थी।"[4] ईस्ट इण्डिया कम्पनी के1813 तक के त्रुटिरहित व्यवसायिक लेखे उपलब्ध थे किन्तु उसके बाद की सूचनाएं अनुपलब्ध हैं।

1792 से 1857 के बीच के समय का उल्लेख करते हुए आर सी दत्त कहते हैं– "यह देखा गया है की यदि 14 वर्ष तक घाता हुआ तो 32 वर्ष लाभ के रहे। घाटा लगभग 1 करोड़ 70 लाख का हुआ तो लाभ लगभग 4 करोड़ 90 लाख का। अतः भारतीय प्रशासन का कुल वित्तीय लाभ 46 वर्षों के दौरान 3 करोड़ 20 लाख का हुआ। लेकिन भारत में इस धन की बचत नही हुई। और न ही इनका सिचाई अथवा सुधार के अन्य कार्यों पर उपयोग किया गया। यह सारा धन कम्पनी ने शेयरधारकों के लाभांश का भुगतान करने के लिए इंग्लैंड भेज दिया गया। और चूंकि भारत से इस धन का प्रवाह लाभांश का भुगतान करने में पर्याप्त नही था। अतः ऋण का योग बढ़ता गया। जिसे भारत का 'सार्वजनिक ऋण' कहा गया।"[5]

1858 का अधिनियम को स्पष्ट करते हुए डॉ आंबेडकर लिखते हैं– "1834 के अधिनियम के द्वारा कम्पनी 'वाणिज्यिक निगम' नहीं रही। यह मानना भूल होगी कि 1857 के गदर में परिलक्षित

अकुशलता के कारण ईस्ट इंडिया कम्पनी समाप्त कर दी गई। इसके विपरीत वास्तव में गदर की घटना के पूर्व सम्राट द्वारा भारत सरकार का कार्यभार ग्रहण करते हुए 'सीधा नियंत्रण' रखने की तीव्र अभिलाषा सुलग रही थी। यह घोषणापत्र (1858 महारानी विक्टोरिया का सन्देश) भारत में पढ़ा गया तथा इसे भारत का मैग्नाकार्टा समझा गया, मैग्नाकार्टा इसलिए नहीं कि इसमें जनता को प्रदत्त अधिकार निहित थे वरन वह एक महान दस्तावेज था"[6]

प्रश्न उठता है भारतीय ऋण के लिए कौन जिम्मेवार ? मेजर विनगेट ने दो प्रश्न किये– क्या भारत के लोगों को अपने मामलों का स्वयं प्रबंध करने का अधिकार था ? तथा क्या इस देश की सरकार के हस्तक्षेप किये बिना केवल भारत के कल्याण की दृष्टि से भारत सरकार के कराधान तथा व्यय को विनियमित किया गया है ?

मेजर विनगेट ने इसका उत्तर भी दिया हैं– "भारत सरकार प्रारम्भ से अब तक अपनी शक्तियों अथवा स्वरूप के सन्दर्भ में 'ब्रिटिश सरकार की रचना' रही है। ईस्ट इंडिया कम्पनी को संसद द्वारा ब्रिटिश राष्ट्र के 'साधारण ट्रस्टी' के रूप में घोषित किया गया। भारत सरकार एक देश की सरकार नहीं थी बल्कि सामान्यतः 'ब्रिटिश सरकार का एक विभाग' रही है।भारत का न तो कोई संविधान था और न ही कोई राष्ट्रीय सरकार थी। उस पर तो केवल विजित देश के रूप में राज्य किया गया।भारतीय ऋण को इस देश की सरकार द्वारा खर्च किया गया तो फिर हम किस प्रकार अपने को भारतीय दायित्वों से स्वतंत्र मांन सकते हैं ?"[7]

मेजर विनगेट की स्वीकृति ईस्ट इण्डिया कम्पनी की पोल खोलती है। इंग्लैंड को हुए लाभ और भारत को हुई हानि का जिक्र करते हुए मेजर विनगेट कहते हैं– वे लाभ चाहे वे छोटे हैं अथवा बड़े इस देश को कुछ प्राप्त नहीं हुआ है।...यह आश्चर्य की बात है कि हमने उपनिवेशों पर इतना अधिक धन खर्च किया है तथा कृतघ्न विदेशियों के लिए किये गए युद्धों पर व्यय किया है, लेकिन हमने अपने महान भारतीय साम्राज्य के अधिग्रहण अथवा सुधार पर इतना कुछ नहीं किया। एक पैसा खर्च किये बिना भारत पर कब्जा कर लिया और यह भी सत्य है कि भारत पर एक पैसा भी कम नहीं किया गया, लेकिन भारत ने नियमित रूप से ग्रेट ब्रिटेन को भारी मात्रा में धन का भुगतान किया है जो कि वर्तमान सदी की मुद्रा में एक सौ करोड़ पौंड से भी अधिक होंगे।"[8] डॉ आंबेडकर मेजर विनगेट द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य के अन्याय की स्वीकारोक्ति को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं–

'क्या भारत में हमारी नीति उस देश के लोगों के कल्याण हेतु विशुद्ध निस्वार्थ एवं परोपकार के लिए निर्धारित थी? क्या यह वही सिद्धांत था जिसने हमारे देश में आयातित भारतीय उत्पादों पर प्रतिरोधात्मक कर थोपे तथा भारत में आयात की गई ब्रिटिश वस्तुओं पर नाम मात्र के कर लगाए गए ? क्या यह भारत के प्रति आदर सूचक है कि भारत से ग्रेट ब्रिटेन को निर्यात की गई कपास पर कोई शुल्क नहीं लगाया गया जबकि विश्व के अन्य भागों में निर्यात की जाने वाली कपास पर कर लगाया गया ? क्या यह भारत के हित की बात थी कि ब्रिटिश जहाजों द्वारा भारत में लाया गया शुल्क अन्य देश को जहाज द्वारा भेजे गये उसी माल पर लगाए गये शुल्क से दुगना था ? क्या अपराधी मामलों के साधारण न्यायालयों के न्यायधीश से भारत में यूरोप–निवासियों को छूट प्रदान करने में भारत का कोई हित जुड़ा था, जिससे ब्रिटिश अपराधियों को देश के न्याय की तराजू से तोलना असम्भव हो गया था और 99 प्रतिशत ब्रिटिश अपराधियों को दंड नहीं दिया जा सकता था ?[9] क्या यह देशवासियों के निस्वार्थ आदर की भावना थी जिससे ब्रिटिश अधिकार वाले क्षेत्रों में लागू नियमों के विरुद्ध ब्रिटिश राजकोष से उनकी सैनिक सुरक्षा का खर्च वहन करने के लिए भारत से भारी कर के रूप में धन एकत्र किया गया ?

भारतीय राजस्व जिसके अंतर्गत भारत में लगभग 10 करोड़ पौंड स्टर्लिंग कर के रूप में एकत्रित किये गये उसे वर्तमान सदी में ग्रेट ब्रिटेन को स्थानांतरित कर दिया गया जो केवल भारतीय

लोगों के लाभ के उद्देश्य से ही एकत्र किये गए– ऐसा क्यों किया गया गया ? इस विषय में डॉ आंबेडकर सत्य से अवगत करवाते हुए सभी प्रकार के विधिक और मानवीय तर्कों की धज्जियाँ उड़ाते तथ्य प्रस्तुत करते है–

ब्रिटिश संसद ने भारतीय ऋण में अपनी भागीदारी से स्पष्ट इनकार कर दिया , जिससे साम्राज्य का अधिग्रहण किया गया था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी का सम्पूर्ण ऋण जो 94,73,3484 पौंड था और अधिकांश अनुत्पादक था उन गरीब देशवासियों के कंधें पर डाला था, जिनका कम्पनी के क्रिया–कलाप में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं था। इतना ही नहीं, इस दुर्भाग्यपूर्ण गदर से 4,00,00,000 (चार करोड़) पौंड का भार भी भारतीयों पर पड़ा, जोकि साम्राज्य के अधिग्रहण के लिए वैध खर्च था। गदर की यह कीमत उचित रूप से इंग्लैण्ड को ही देनी चाहिए थी। परन्तु यह सारा व्यय भारतीयों से वसूला गया। डॉ अम्बेडकर जान ब्राइट की स्वीकारोक्ति को उद्धृत करते हुए बताते हैं– "4 करोड़ पौंड क्रांति की कीमत भारत के लोगों पर गम्भीर भार है। यह इंग्लैंड की संसद तथा यहाँ के लोगों के "कुप्रबंध के कारण" है। यदि प्रत्येक व्यक्ति न्यायोचित रूप से भागीदार बनता तो निसंदेह ही 4 करोड़ का भुगतान इंग्लैण्ड के लोगों पर 'कर लगा कर' उनसे वसूल कर लिया जाता।"[10] "भारत सरकार ऋण" का सच अत्यंत कडवा है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के 'स्टाक की व्यवस्था' भी बहुत अधिक दबाव और दोषपूर्ण थी। कम्पनी के स्टाक को ऋण लेकर चुकाया गया , जिस पर पहले ही भारी ऋण लिया हुआ था तथा जिसे –"भारत सरकार ऋण" के रूप में जाना जाता है। ऋण चुकाने ले लिए ,भारतीय लोगों से अरबों–अरब पौंड, अनैतिकता पूर्ण कर रूप में लिए गए। अम्बेडकर जी अत्यंत शालीन स्वर में कम्पनी के 'शून्य–योगदान' का सच बताते हुए कहते हैं कि भारत के सोने एवं चांदी के भंडार में इंग्लैण्ड ने कुछ भी योगदान नहीं दिया है जबकि इसके विपरीत भारत को खाली कर दिया है।[11] भारत का सार्वजनिक ऋण पूरी तरह से ब्रिटेन के युद्धों का खर्च था , जिसका भारत से कोई लेना देना नहीं था , परन्तु दुर्भाग्यवश उस कर्ज का बोझ भारत को उठाना पड़ा।इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि एक यूरोपीय सैनिक का वेतन भारतीय की तुलना में चार गुना अधिक था, यद्यपि युद्ध शांति के नाम पर लड़ा गया था। इस प्रकार वे ईस्ट इण्डिया के योगदान को अलाभकर राज्य के रूप में देखते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अम्बेडकर जी ने वर्ष 1792 से वर्ष 1858 की अवधि के दौरान ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रशासन और वित्त में हुए बदलावों का मूल्यांकन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि औपनिवेशिक शासकों ने भारतीयों पर बहुत अन्याय किया था। औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था पर अम्बेडकर जी की आलोचना आर्थिक इतिहास, आर्थिक अर्थव्यवस्था और मौद्रिक अर्थशास्त्र पर उनके अनुभवजन्य और सैद्धांतिक काम पर आधारित थी।

सन्दर्भ–सूची :–

1 डॉ आंबेडकर का आर्थिक चिंतन, लेख , ओमप्रकाश कश्यप,6 दिसम्बर 2016
2 ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रशासन और वित्त प्रबंध–डॉ बी.आर.अम्बेडकर, पृष्ठ 7
3 वही , पृष्ठ 30
4 वही ,पृष्ठ30
5 आर.सी.दत्त, इंडिया अंडर अरली ब्रिटिश रुल, पृष्ठ 408
6 ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रशासन और वित्त प्रबंध–डॉ बी.आर.अम्बेडकर, पृष्ठ37–38
7 वही , पृष्ठ 41
8 वही , पृष्ठ 42
9 वही, पृष्ठ 44
10 वही,पृष्ठ 46
11 वही, पृष्ठ 47

कोविड-19 का प्रकोप और हिंदी कविता की भूमिका

डॉ. एम. अब्दुल रजाक*

'कोरोना है कितनी जालिम, दिल दुखा के मार देती है,
फिर भी नहीं बुझाएँ हमनें दीए वफा के।'

वर्तमान कोरोना संकट के समय समाज में चारों ओर त्राही–त्राही की आवाज गूँज रही है। यह आवाज सिर्फ भारत में ही नहीं पूरे विश्व में फैली हुई है। परिवर्तन सृष्टि का नियम है, लेकिन समय–समय पर समाज में प्रकोप आती है तो कई लोगों को रुकस्त कर ले जाती हैं। जैसे–जैसे दुनिया में प्रकृति के प्रकोप आए हैं वैसे–वैसे मनुष्य उन प्रकोपों का शिकार हुए हैं। यह आज की नहीं बहुत समय से चली आ रही है। केदारनाथ सिंह ने सही लिखा हैं कि–

"हवा चाहे इतनी भी कम हो गई हो
जितनी होती है सायकल के टैर में
चाहे बदस्तल से लैटे हो
जितनी विभिशण की परिस्थिति में हो
हमें जीना होगा और यही इसी शहर में जीना होगा
इंच इंच जीना होगा चप्पा–चप्पा जीना होगा।"

उपर्युक्त कविता में वर्तमान समय की स्थिति को दर्शाते हुए साहित्य के मूल संवेदना को स्पष्ट किया है। साहित्य कोई बीमारी का इलाज या दवा तो देता नहीं है लेकिन मनुष्य को भीतर से तब्दील करता है, जब भीतर से तब्दील होता है तो कुद–ब–कुद बाहर आ जाता है। इससे मनुष्य में जिजीविषा की इच्छा को जन्म देता है। इसका परिणाम यह होता है कि मनुष्य दहशत और खौफ से उपेक्षित रहता है। साहित्य हमेशा मनुष्य को मनुष्य की तरह देखने की दृ ष्टि पैदा करता है। लेकिन हर जमाने में साहित्य ने मनुष्य के आत्मविश्वास को मजबूत प्रधान किया है। साहित्य और समाज का संबंध बहुत गहरा होता है और समाज के बिना साहित्य नहीं होता है लेकिन साहित्य का मूल उद्देश्य समाज को प्रगतिशील और लोक कल्याण की मनोकामनाओं को पूरा कराना होता है। आज साहित्य कोरोना संकट के समय में भी एक ही उद्देश्य को लेकर आग बढते जा रहा है। इस दृष्टि से देखा जाए तो समाज और साहित्य में फर्क करना मुश्किल तो है लेकिन उसमें बारीख से पडताल किया जाए तो साहित्य का स्थान ऊँचा दिखता है।

दरअसल मनुष्य का जीवन संघर्ष शील होता है, उस में कई सारी बाधाएँ, मुश्किलें और कई मोड भी होते हैं, इन सभी चीजों से झूझते हुए आगे बढ़ना ही जीवन है। मनुष्य जीवन में समाज के संघर्षों और नैतिक मूल्य तो होते हैं। वे ही तो जीवन में बहुत मायने रखते है और उनसे भविष्य निर्माण के स्वप्नों को भी जन्म देते हैं। मुक्तिबोध ने सही लिखा हैं किदृ" जब तक हमें भविष्य निर्माण के स्वप्न नहीं आते तब तक हमारी कला और साहित्य कमजोर रहेगा और उसमें सच्ची शक्ति नहीं आएगी।" मनुष्य में एक संभावना हो जिसमें भविष्य के निर्माण की सपनों के अनुगूँज हो। यह सही है कि मनुष्य अपने समय की वास्तविकता से टकराकर अपनी जिजीविषा को आगे बढाता है, परंतु सिर्फ वास्तविकता से वह जिजीविषा पुष्ट नहीं हो सकता,

*** सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, क्रिस्तु जयंती महाविद्यालय (स्वायत्त), के– नारायणपुरा, कोतानूर पोस्ट, बेंगलूरु, पिन–560077।**

इसके लिए वास्तविकता के साथ संभावना की भी जरूरत पडती है। मनुष्य की सार्थकता वास्तविकता के साथ संभावना को साथ लेकर चलने में ही है।

हिंदी के आलोचक अभिषेक रौशन ने सही लिखा हैं कि एक ओर हमें जीवन की यथार्थता और दूसरी ओर संभावना से परे है। उस बात को रौशन जी ने अपने शब्दों में लिखते हैं कि–"एक ओर 'दुख ही जीवन की कथा रही',तो दूसरी ओर 'और भी फलिक होगी छवि' या 'जागे जीवन का रवि, एक ओर मित्रवर! विजय होगी न समर तो दूसरी ओर 'वह एक और मन रहा राम का जो न थका'।" यहाँ रौशन जी ने वर्तमान कोरोना संकट की घड़ी को याद कराते हुए मनुष्य की स्थिति को हिंदी काव्यों में निहित आत्मबल से जुडे वास्तविकता एवं संभावना को साधन एवं उपकरण के माध्य के रूप में दर्शाया है।

जीवन में सपने बहुत महत्वपूर्ण होते है क्यों कि जीवन में भविष्य के सपनों से ही जिजीविषा की कामना उत्पन्न होती है यदि हमारे भविष्य की सपनें नहीं होतो मृत्यु के बराबर है। इसी बात को अवतार सिंह पाश के शब्दों में कहा जाए तो सठीक लगता है। पाश जी लिखते हैं कि–

"सबसे खतरनाक होता है
मुर्दा शांति से भर जाना
न होना तडप का सब सहन कर जाना
घर से निकलना काम पर
और काम से लौटकर घर आना
सबसे खतरनाक होता है
हमारे सपनों का मर जाना
सबसे खतरनाक वह घडी होती है
आपकी कलाई पर चलती हुई भी जो
आपकी निगाह में रुकी होती है।"

यहाँ पाश जी इस बात को समझाते है कि यदि मनुष्य के सपनें नहीं है तो वह मृत्यु के बराबर होता है। जो आज के कोरोना प्रकोप की स्थिति में हमें वास्तविकता के साथ संभावना को लेकर आगे बढना है। भविष्य के सपनों को याद करते हुए अपने आत्मविश्वास एवं आत्म बल को मजबूत रखना है। वास्तव में मनुष्य का जीवन गति शील प्रक्रिया से जुडा है, इस में कई सारे उतार और चढ़ाव आते ही रहते हैं। इन समस्याओं को टकराते हुए आग बढ़ना ही जीवन है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जीवन की मार्मिक बात को दर्शाते हुए लिखा है कि लड़खडाना गिरना नहीं होता बल्कि संभालना भी होता है। सक्सेना जी लिखते हैं कि–

"काँपते पैरों पर
वर्तमान का कंधा पकड़
खड़ा हो जाता है बीमार भविष्य
और नए सिरे से चलना सीखता है
लड़खड़ाना अक्सर गिरना नहीं
संभालना भी होता है। "

यहाँ उपर्युक्त कविता के पंक्तियों से सर्वेश्वर दयाल सक्सेना इस बात को समझाते हैं कि कोई सुख बड़ा नहीं होता और कोई दुख छोटा नहीं होता। दो दिन का गम है और ऐसी

स्थिति में अपने आत्मविश्वास को बुलंद रखना बहुत जरूरी है। साहित्य तो हमेशा समाज को आत्मनिर्भर एवं आत्मविश्वास को मजबूत प्रधान किया है।

साहित्य पूरी मानवता का होता है। साहित्य एक देश का नहीं, पूरे विश्व का होता है। साहित्य बन्धन का नहीं मुक्ति होता है। साहित्य में घृणा का नहीं आत्मीयता का रूप होता है। वर्तमान समय में पूरी दुनिया कोरोना वायरस से उपजी बीमारी कोविड–19 के प्रकोप से जूझ रहे हैं। यह महामारी का रूप धारण कर लिया है,ऐसी स्थिति में इस खतरनाक बीमारी का असर अपने देश में ही नहीं पूरे विश्व में भी बढ़ती ही जा रही है। आने वाले दिनों में यह तय करना मुश्किल है कि पूरे दुनिया में यह महामारी क्या रूप लेगी? और यह बहुत कुछ इस पर निर्भर करेगा कि सरकार और उसकी संस्थाओं के साथ–साथ देश के आम और खास लोग यानी सभी देशवासी कितनी तत्परता से कोरोना वायरस के संक्रमण को कितना रोकने की कोशिश करते हैं? ऐसे समय में साहित्य का क्या योगदान है? उपर्युक्त प्रश्न पर प्रकाशडाला जाए तो जाहिर है कि साहित्य हमेशा लोगों के मनोबल को कायम रखने की बात करती है। प्रेमचंद ने सही कहा था कि "साहित्य का मूल उद्देश्य संस्कार को सिखाना है।" इस बात पर चिंतन किया जाए तो कोई भी संस्कृति एवं सभ्यता बुरी नहीं होती है, उसमें धीरज एवं धर्य का उल्लेख जरूर होता है। इन चीजों को याद करते हुए आगे बढ़ना है। आज के कोविड–19 के समय सरकार की ओर से जो नियम एवं कानून की बात को अपनना हर नागरिक का कर्तव्य बनता है। कोरोना वायरस के निवारण एवं संक्रमण से बचे रहने के लिए एक जुटता, संयम और सहयोग बनाए रखना भी बहुत जरूरी है।

आज हम सबके सामने एक अलग किस्म की चुनौती आ खड़ी हुई है। यह एक कठिन चुनौती है और इसीलिए हालात मुश्किल भरे पडे हैं। इन मुश्किल हालातों में विश्व की एकजुटता, संयम और अनुशासन के साथ सहयोग भी होनी है। लेकिन कुछ परख होने के बाद भी हम कुछ नया सीखते है। वह है आत्मविश्वास, संभावना आदि। साहित्य में आत्मविश्वास और संभावना बहुत ताकत की चीज होती है। इससे हर कोई महान बनता है। सर्वेश्रर दायल सक्सेना की 'तुम्हारे साथ' कविता में लिखे हैं कि –

"तुम्हारे साथ रह कर अक्सर
हमें ऐसा लगा कि जैसे
हम असमर्थताओं में नहीं
संभावना से परे हैं
एक दीवार में द्वार बन सकता है
उस द्वार से पूरा का पूरा पहाड गुजार सकता है।"

जीवन में कुछ चीजे नामुमकिन है वह मुमकिन हो जाते है। जो चीज असंभावना था वह संभावना बन जाते हैं। इस विषय को लेकर सक्सेना जी उपर्युक्त कविता में बहु आयाम के रूप में प्रकाश डाला है।

साहित्य हर जमाने में मनुष्य का जीवन साथी रहा है क्यो कि साहित्य मनुष्य को भीतर से अपने आत्मविश्वास को मजबूत प्रधान करता है। इससे मनुष्य अपनी सारी मुश्किलों को असानी के साथ सफल बनाने की कोशिश करता है। हमें इस तरह के हाल–बेहाल सी स्थिति में भी आगे बढ़ने की शक्ति साहित्य ही देता है। साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध होता है। ये दोनों एक सिक्के के दो पहलू होते हैं, कभी साहित्य समाज से प्रभावित होता है तो समाज साहित्य से प्रभावित होते रहते है। यह निरंतर चलने वाले जीवन प्रक्रिया है।

एक ओर साहित्य का हित और सहित भाव समाज के लिए कल्याणकारी होता है, वही समाज का पारम्परिक आचरण साहित्य को शास्त्र(ज्ञान) की गरिमा प्रदान करता है। साहित्य को तात्कालिक सामाजिक संक्रमण से प्रभावित तो करते हैं, परन्तु सर्जक जो समय और शास्त्र दोनों का ज्ञाता और दृष्टा होता है, वह हंस के नीर क्षीर विवेक की भाँति सांस्कृतिक एवं असांस्कृतिक में से सांस्कृतिक को चुनता है और शब्द के बल पर समाज को देता है। वैदिक साहित्य के बाद का सृजित साहित्य इसका प्रमाण है। कोरोना वायरस के संक्रमण के जमाने में हर कोई आत्मविश्वास को बरकरार रखना चाहिए और यह साहित्य से ही संभव हो सकता हैं चूँकि इस खतरनाक बीमारी को रोकना हम सबकी जिम्मेदारी है इसलिए सभी को अतिरिक्त सावधानी का परिचय देना होगा और यह ध्यान रखना होगा कि कई बार सफलता टीम के सबसे अच्छे खिलाड़ी पर नहीं, बल्कि कमजोर खिलाड़ी के प्रदर्शन पर निर्भर करती है। सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की 'राम की शक्ति पूजा' कविता में राम हर तरह से कमजोर हो चुके है फिर दूसरा एक मन और रहा राम का ना थका। निराला जी लिखते हैं कि–

"धिक्, जीवन जो पाता ही आया है विरोध,
धिक् साधन जिसके लिए किया है सदा शोध
जानकी ! हाय उद्धार प्रिया का हो न सकाय
वह एक और मन रहा राम का जो न थका।"

यहाँ निराला जी राम को आदर्श पुरूष नहीं बल्कि एक साधारण वीर (मानव) के चरित्र के रूप में अभिव्यक्त किया है– राम का एक मन का मतलब मनुष्य के मन के बराबर है। जो कभी थकता नहीं है। अर्थात् कहने का तत्पार्य है कि राम को अपनी माँ(कौसल्या) की बात याद आती है वे कहती थी कि राम के आँखे फूल के समान हैं। राम को शक्ति की पूजा के लिए और फूल बाकी है, उस समय राम को यह बात याद आती है। यहाँ चर्चित संदर्भ साहित्य से उभर कर आए विचार हैं, जो हमेशा मनुष्य को भीतर से मजबूत बनाने का कार्य करता है।

जैसे समय बदलता जाता है वैसे समय के अनुसार नए–नए बीमारियों का आगमन होते हैं, यह प्रकृति का नियम है। जैसे–प्रकृति के साथ छेड–छाड करेंगे उसके परिणाम भी वैसे ही होंगे। हमें प्रकृति के साथ जुड़कर रहना चाहिए। साहित्य का सृजन प्रकृति के माहौल से होता है। इसलिए पाश्चात्य चिंतक जीन–जक्कुएस रूसो(Jean Jacques Rousseau) ने कहा था कि 'प्रकृति ओर लौटो'(Go back the nature)। आने वाली पीढि हमेशा तकनीकी एवं विज्ञान में उलजे हुए है। आज के पीढि में साहित्य के प्रति घृणा की भावना से देखते हैं। वे नहीं समझते हैं कि साहित्य में समाज निर्माण की शक्ति होती है। कोई भी विचार शब्दों में बंधकर ही स्थाई होता है और पीढ़ियों तक पहुँचता है। भावी पीढ़ी विगत की श्रेष्ठताओं के प्रकाश में अपना मार्ग बनाती है। यह निरंतरता ही उसे परम्परा का आकार देती है। श्रेष्ठता संस्कृति का अधिष्ठान बनाती है। संस्कृति, साहित्य के अभाव में स्मृति के विस्तार में खो जाती है। कभी–कभी विनाश भी हो जाती है। इस बात को कहने कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यदि जिस देश का साहित्य नष्ट हो जाता है तो उसकी संस्कृति स्वतः नष्ट हो जाती है।

जीवन में आत्मविश्वास हर मनुष्य के लिए बहुत जरुरी होता है। जिस मनुष्य के पास आत्मविश्वास होता है वह अपने जीवन की सभी समस्याओं तथा हर मुसीबत से लड़ सकता है। अंत साहित्य तो हमेशा मनुष्य को अच्छी संस्कृति, अच्छे संस्कार, जीवन दृष्टि और समाज को कल्याणकारी ओर आगे बढाने का कार्य करता है। साहित्य मनुष्य को मनुष्य होने की बात सिखाता है, यह साहित्य की मूल उपलब्धी है। इन मनुष्य होने की बात को याद रखते हुए जब

करो या मरो वाली कोरोना वायरस के बीमारी की स्थिति हो तो पूरे दुनिया के हर मनुष्य को यह संकल्प लेना चाहिए कि हर व्यक्ति को अपने आत्मविश्वास को बरकरार रखना बहुत ही जरूरी है। आज दुनिया में कोरोना वायरस के लिए शिकार हुए आँकडों को देखकर हताश होने की जरूरत नहीं है क्यों कि इससे मनुष्य अपनी मनोबल को खो देता है। इसलिए हर बात को दहशत की दृष्टि से नहीं निडर की दृष्टि से देखना चाहिए। तब आपका आत्मविश्वास मजबूत रहता है।

वास्तव में साहित्य एवं समाज का गहरा संबंध है समाज के बिना साहित्य निर्मित ही नहीं हो सकता। साहित्य केवल समाज का दर्पण नहीं होता, बल्कि साहित्य भूतकाल एवं वर्तमान काल की छवि को महसूस करते हुए भविष्य का सच भी दिखा सकता है अगर मात्र दर्पण होता तो वह केवल वही दिखाता, जो वर्तमान में है। तब वह आने वाले कल को भी बयान भी नहीं कर पाता। साहित्य का उद्देश्य हमारी अनुभूतियों की तीव्रता को बढ़ाने के अलावा वर्तमान समाज और भविष्य के पथ प्रदर्शक का खोज करना होना चाहिए। इसलिए जिस समय साहित्य की रचना की जाती है, उस समय की परिस्थितियों का समावेश अवश्य ही होना चाहिए। साहित्य तो समाज में अपना काम करते रहता है लेकिन उसके साथ–साथ हर मनुष्य का कर्तव्य बनता है कि केंद्र सरकार, राज्य सरकारों और उनके स्थानीय प्रशासन की ओर से दिए गए आदेशों–निर्देशों का पालन करके देश और दुनिया को बचाने का जिम्मेदार होता है। कोरोना वायरस के संक्रमण से हमें खुद के साथ औरों को ही नहीं पूरे दुनिया को भी बचाना है। खुद इस बीमारी से बचे रहकर ही हम देश बचाने का संकल्प पूरा कर सकते हैं। आइए संकट की इस घड़ी में हम सब कोरोना को भगाने का संकल्प लें।

मैं अंततः निष्कर्ष के रूप में समाज में साहित्य की क्या भूमिका होती है ? इस बात को राजेश कुमार कौरव की साहित्य पर लिखी गई कविता में साहित्य का मूल उद्देश्य एवं अतीत से वर्तमान से भविष्य को तब्दिल करने का संदेश झलकता है। इन पंक्तियों को दोहराते हुए अपनी बात को विराम करता हूँ। कविता की पंक्तियाँ–

साहित्य देता रहा सदा से, / दिशा देश और समाज को।
साहित्यकार बदल देता है, / चिन्तन,चरित्र,व्यवहार को।।
राष्ट्र को मिलती रही चेतना, / समाज भी चौतन्य होता है।
साहित्य सम्पर्क व सानिध्य, / युग परिवर्तन कर सकता है।।

संदर्भ–सूची :–

1. केदारनाथ सिंह– प्रतिनिधि कविताएँ – प्रतिनिधि कविताएँ–पृ–43।
2. संपा. नेमिचंद्र जैन– मुक्तिबोध रचनावली, भाग–5, पृ–21।
3. डॉ.अभिषेक रौशन– बालकृष्ण भट्ट और आधुनिक हिंदी आलोचना का आरांभ– पृ–22।
4. अवतार सिंह पाश– संपूर्ण कविताएँ– पृ–200।
5. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना– प्रतिनिधि कविताएँ–पृ–68।
6. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना– प्रतिनिधि कविताएँ–पृ–32।
7. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला– रागविराग–पृ– 48।

'वापसी' कहानी : समय और संवेदना

आदित्य नाथ तिवारी*

स्वतंत्र भारत की संकल्पना में मिश्रित अर्थव्यवस्था एवं लोकतांत्रिक विकास का स्वरूप विकसित हुआ औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया ने महानगरों में पलायन को बढ़ाया गांव में खेती की अनेक समस्याओं एवं आपदाओं के कारण यह क्षेत्र (खासकर उत्तर भारत क्षेत्र में) निश्चित रोजगार के लिए बाधक रहे आर्थिक सुदृढ़ता हेतु पलायन आरंभ हो चुका था इस पलायन से केवल आर्थिक स्तर पर बदलाव नहीं अपितु स्थान परिवर्तन से सांस्कृतिक स्तर पर परिवर्तन को रेखांकित किया गया। सामाजिक परिवर्तन की गहरी अनुभूति साहित्य में अभिव्यक्त होती है, जिसका परिणाम नई कहानी में देखा जा सकता है। सुरेंद्र चौधरी कहते हैं– 'बोध और भावना दोनों में कहानियां जीवन के अधिक निकट आ गई हैं। अंतःक्रिया का रूप अधिक सामाजिक हो गया है।'[1] यही कारण है की नयी कहानी में पलायन के विभिन्न रूपों को प्रमुखता दी गयी। एक स्थान से दूसरे स्थान पर सामान्य या विपरीत परिस्थितियों में किया जा रहा पलायन लगातार मनुष्य को सीमांत बना रहा था। यह पलायन गांव से शहरों की तरफ सुविधाओं एवं विकास की नई धारा में सम्मिलित होने के लिए किया जा रहा था। स्थान परिवर्तन को रोबर्ट इ पार्क ने भी व्यक्ति के हाशिये पर जाने का एक बड़ा कारण माना है, जिसका स्थान परिवर्तन हुआ वह घर की संस्कृति से कटने के लिए बाध्य हुए। घर की संस्कृति से कटने के बाद व्यक्ति अपने आप को नए समाज में व्यवस्थित नहीं कर पाता है। दोहरी मानसिकता में जीने के लिए बाध्य हो जाता है। अप्रवासियों के साथ यह सबसे बड़ी समस्या उत्पन्न होती है। संक्रमण काल में उनके चरित्र में नैतिक द्वन्द और संघर्ष की भावना विकसित होने लगती है, जिसके परिणामस्वरूप वे पुरानी आदतें छोड़ने के लिए बाध्य हो जाते हैं लेकिन नई आदतें इतनी जल्दी बन नहीं पाती जिसके कारण अपने आप को भी हाशिए पर खड़ा महसूस करते हैं। नई कहानी में यह प्रवृत्ति बेहद मार्मिक ढंग से एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रकट होती है इस संपूर्ण विकास प्रक्रिया में व्यक्ति अकेला महसूस करता है जिसकी प्रबल अनुभूति वापसी कहानी में उषा प्रियंवदा ने की है।

यह कहानी सर्वप्रथम अगस्त 1960 के नई कहानियां अंक में प्रकाशित हुई जिसे पत्रिका की ओर से प्रथम पुरस्कार दिया गया। कहानी में निरंतर छोटी–छोटी घटनाओं के दृश्य चित्र घटते हुए प्रस्तुत होते हैं। तथा सभी चित्र कुल मिलाकर एक जीवन मर्म का अर्थ ग्रहण कर लेते हैं। कहानी के मुख्य पात्र गजाधर बाबू रेलवे में 35 वर्ष की नौकरी के पश्चात रिटायर होकर घर जा रहे हैं। शहर में एक मकान पत्नी दो बेटे और दो बेटियां हैं पहले दो बच्चे अमर और कांति का विवाह कर चुके हैं। दो बच्चे नरेंद्र बसंती उच्च शिक्षा की कक्षाएं ले रहे हैं। यह है गजाधर बाबू का पूरा परिवार इसलिए लेखिका इसे संसार की नजर में सफल जीवन कह रही हैं। काल की दृष्टि से यह सफल व्यक्तित्व की निशानी थी परंतु वास्तव में जो मूल्य बदल रहे थे उनको भी समझना अनिवार्य है।

इस कहानी की संरचना का तीन स्तर है जो गजाधर बाबू के संपूर्ण व्यक्तित्व एवं परिवेश को अभिव्यक्त करता है। रिटायर होने के बाद घर के बारे में सोचने का भाव, वहां पहुंचने के बाद की स्थिति और वहां से फिर से पलायन कर संपूर्ण मानसिकता बेचैनी और घुटन के माहौल को

---

* **शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।**

जीने का भाव अभिव्यक्त होता है। विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं— दिनों दिन बढ़ते हुए औद्योगीकरण के कारण नगरों में भीड़ भाड़ बढ़ती गई इससे अपरिचय का वातावरण विकसित हुआ।[2] यह अपरिचय मात्र शहर तक सीमित नहीं था बल्कि यह व्यक्तित्व में सम्मिलित हो गया जिसका परिणाम हमें वापसी कहानी में देखने को मिलता है।

इस कहानी का पहला स्तर गजाधर बाबू के रिटायर होने के बाद घर के बारे में सोचने के भाव से है। मध्यवर्गीय पिता के रूप में गजाधर बाबू खुद स्टेशनों पर कम सुविधाओं में रहकर बच्चों को अच्छी शिक्षा देते हैं, जो एक मध्यवर्गीय पिता का सपना होता है। घर जाने से पहले उनके रेलवे क्वार्टर में आंगन के रोपे पौधे भी जान पहचान के लोग ले गए थे, लेकिन गजाधर बाबू तो बस पत्नी बाल बच्चों के साथ रहने की कल्पना में विलीन हो गए थे। उनको याद आ रहा है कि जब परिवार यही था तब ड्यूटी से लौटकर बच्चों से हंसते बोलते पत्नी से कुछ मनोविनोद करते हैं उन सब के चले जाने के बाद जीवन में गहन सूनापन भर गया जब व्यक्ति इंतजार करता है, तो दिन भी वर्ष लगते हैं कुछ पल का वह स्नेह उन्हें बार–बार उसी परिवार का बनाना चाहता पर... 'बरसों तुम सबसे अलग रहने के बाद अवकाश पाकर परिवार के साथ रहूंगा यह दृश्य मन को प्रफुल्लित एवं आनंद दे रहा है।' गजाधर बाबू का आखिर सपना सच होने जा रहा है यह संपूर्ण प्रक्रिया उनकी मानसिक प्रक्रिया है जो घर जाने से पहले उनके भीतर चल रही है।

दूसरे स्तर पर कहानी का पूरा का पूरा स्वरूप बदल जाता है। घर जाने के पहले ही दृश्य में गजाधर बाबू बिना चेतावनी के प्रवेश करते हैं। तब अचानक 'नरेंद्र धप से बैठ गया और चाय का प्याला उठा कर मुंह से लगा लिया। बहू को होश आया और उसने झट से माथा ढक लिया केवल बसंती का शरीर रह–रहकर हंसी दबाने के प्रयास में हिलता रहा इतना बड़ा आश्चर्य, जो पिता खुले व्यवहार के साथ मनोविनोद में भाग लेना चाहते हैं। वह बच्चों के पिता रूपी पूर्वाग्रह के कारण उन्हें कुंठित एवं चुप बना देता है। यह पीढ़ियों का अंतर (जनरेशन गैप) है। ऐसा लगता है कि पिता नहीं आए बल्कि ऐसे कोई औचक निरीक्षक आ गया और सभी सतर्क होकर हरकतें करने लगे दूसरी ओर गजाधर बाबू का यह कहना 'बसंती चाय मुझे भी देना' और फिर चाय तो फीकी है बसंती के मन में पिता के संपूर्ण व्यक्तित्व को व्यंजित कर देता है। कभी–कभी ऐसा लगता है कि पिता खुद बच्चों से घुलना चाहते हैं। कितनी बातें करना चाहते हैं। उनके बारे में पूछना चाहते हैं और स्वयं बताना चाहते हैं, परन्तु संतान के मस्तिष्क में बनी बनाई परिपाटी पिता को ही बोझ एवं विकास बाधक का कारक समझ लेती है।

घर आने के बाद गजाधर बाबू दो स्तर पर प्रभावित होते हैं। पहला बच्चों के व्यवहार से तथा दूसरा पत्नी के व्यवहार से। पत्नी का यह पूछना अरे आप अकेले बैठे हैं। यह सब कहां गए? गजाधर बाबू के मन में फांस–सी उठी यह कथन पिता को अलग तरह के अलगाव में खड़ा कर देता है। कहीं ऐसा दृश्य नहीं, जहां पिता का समाचार पूछा जाए न संतान द्वारा, न पत्नी द्वारा। घर का सारा काम पत्नी के जिम्मे है या पत्नी ने अपने जिम्मे ले रखा है इसमें बेहद अलग दृष्टि परिलक्षित होती है। सारे बर्तन जूठे पड़ें हैं। पूजा करके सीधे चौके में घुसो। पत्नी की यह बात सुनकर गजाधर बाबू परेशान और हैरत में आ जाते हैं। 'सारा दिन इसी खिच–खिच में निकल जाता है। इस गृहस्थी का धंधा पीटते–पीटते उम्र बीत गयी कोई जरा हाथ भी नहीं बटाता।' यह सब सुनकर गजाधर बाबू का यह निर्णय कि आज से बसंती शाम का भोजन तुम्हारे जिम्मेदारी पर, सुबह का भोजन तुम्हारी भाभी बनाएंगी पूरे घर में यह फैसला हलचल मचा देता

है। स्वयं गजाधर बाबू की पत्नी सारा घर सर पर उठा लेती हैं। एक तरकारी और चार पराठे बनाने में सारा डिब्बा घी का उड़ेल दिया मुझे तो मालूम था कि किसी के बस का नहीं और खाने के समय नरेंद्र का चिल्लाना बाबूजी को बैठे–बैठे यही सूझता है अनेक स्थितियों पर पिता परिवार में अलग–थलग दिखाई देने लगते हैं यहां पर पिता का मनोविज्ञान दिखाई देता है जो नए रूप में उद्घाटित होता है।

'अमर अलग रहने की सोच रहा है।' उनके आने से पहले घर की स्थिति का स्वरूप कुछ ऐसा था पहले अमर घर का मालिक बन बनकर रहता था बहू को कोई रोक रोक ना थी अमर के दोस्तों का प्रायः यही अड्डा जमता था और अंदर से चाय नाश्ता तैयार होकर जाता था बसंती को भी वही अच्छा लगता था यह थी गजाधर बाबू के घर की सच्चाई जिसमे फांस बनकर अटक गए थे उनकी खुशियों के। गजाधर बाबू का यह कहना, अमर से कहो जल्दबाजी में कोई जरूरत नहीं। उनकी मंशा को प्रदर्शित करता है कि अब मुझे ही कुछ करना है। ये फैसला भी ले लेते हैं अब घर ही किसी बात में दखल न देंगे बच्चों के जीवन में उनके लिए कोई स्थान नहीं है। तो अपने ही घर में परदेसी की तरह रहेंगे। गजाधर बाबू पूरे वातावरण और पीड़ा के शिकार हो गए थे गए थे। 'हर चीज में दखल क्यों देते हैं बूढ़े आदमी हैं तथा बहू का व्यंग में कहना हैं खर्च बहुत है। 'इधर पत्नी का व्यंग और कुछ नहीं सूझा तो तुम्हारी बहू को चौकी में भेज दिया।' यहां सब सत्ता के संघर्ष के प्रयत्नशील दिखाई देते हैं। बेटे के हाथ से घर की सत्ता, मां की गृहस्थी की सत्ता, बहू के स्वतंत्र जीवन की सत्ता, वही बसंती के जीवन की स्वतंत्रता। सब एक साथ मिलकर गजाधर बाबू को कुरेदने लगते हैं, वह यहां क्यों हैं?

अंततः फैसला लेना गजाधर बाबू की आवश्यकता बन जाता है। यह घर यदि एक व्यक्ति की वजह से पराधीन हो गया है तो वह अपने आप ही खुशियों का गला घोट देंगे। जिस परिवार के लिए उन्होंने इंतजार किया उस परिवार में न रहना ही उचित होगा गजाधर बाबू ने बिना किसी भूमिका के कहा मुझे रामजीमल के चीनी मिल में नौकरी मिल गई है खाली बैठे रहने से तो चार पैसे घर में आएं वही अच्छा है। रुक कर जैसे बुझी हुई आग में चिंगारी चमक उठे उन्होंने धीमे स्वर में कहा परसों जाना है तुम भी चलोगे? मैं? पत्नी का जवाब सुनने का प्रयत्न भी नहीं करना चाहते थे और गहरे मौन में डूब गए उनकी बेचौनी को प्रकट करता है। जो पिता जीवन में निरंतर कोल्हू के बैल की तरह से पैसे कमाता है, क्या उसके प्रति किसी का कोई दायित्व नहीं है। पूरे घर में उनकी सुरक्षा का स्वरूप चारपाई बनता है। उस चारपाई को पत्नी के मालगोदाम कमरे में रखवा दी जाती है। नामवर सिंह कहते हैं कि उनका 'अस्तित्व घर के वातावरण का कोई भाग ना बन सका उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगी जैसे की सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई।'[3]

कहानी का तीसरा स्तर गजाधर बाबू के घर से जाने का है। जब वह गजब वह हीन का बक्सा और पतला सा बिस्तर रखते हैं तो लगता है। उनकी भूमिका हमेशा पलायन की ही रही है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक। अंत में सिनेमा देखने के प्रति बहू बसंती अमर का उत्साह तथा मां का कहना चारपाई कमरे से निकाल दे पैर रखने की जगह नहीं है। स्वतंत्रता को अभिव्यक्त करता है, जो कुछ ही पल पहले से मिली। सत्ता मिलने की स्वतंत्र अनुभूति द्वन्द्व पैदा करती है पूरी घटना 'संकेत है कि पुराने पारिवारिक मूल्य टूट रहे हैं और उसकी जगह निर्मम किंतु यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है।'[4] पलायन ने ऐसा वातावरण तैयार किया है, जिससे व्यक्ति यांत्रिक रूप से मात्र एक उत्पाद बन गया है। पलायन और उससे उपजी समस्या

है जिसमें वृद्ध होती पीढ़ी की पीड़ा उद्घाटित होती है. नई कहानी में लगातार इस विचार को लाने का आग्रह था। इसी मनोवृति का परिणाम हम इस कहानी के मुख्य पात्र गजाधर बाबू में देखते हैं।

कमलेश्वर कहते हैं नई कहानी ने जीवन की सारी संगतियों–विसंगतियों एवं जटिलताओं और दबावों को महसूस किया यानी नई कहानी पहले और मूल रूप में जीवनानुभव है और उसके बाद कहानी है। व्यक्ति को उसके यथार्थ परिवेश में नई कहानी ने अन्वेषित किया है।'[5] यह कहानी तीन चरण घर से आने से पहले के मनोविज्ञान, घर आने के बाद के मनोविज्ञान और घर से जाने के बाद की संपूर्ण मनोस्थिति को व्यंजित करता है जहां पिता, पति के लिए घर की वजह क्वार्टर की भूमिका है और घर जाकर सुकून चाहता है तो भी उसे यह नहीं मिलता जिस घर में हस्तक्षेप तक का अधिकार नहीं है। इन सब विचारों एवं संघर्षों के बीच एक पिता कैसे अपनों के बीच अकेला अलग–थलग पड़ जाता है। यह कहानी उसी छटपटाहट की है, जो गदाधर बाबू को लगातार अपने अंतःकरण में महसूस हो रहा है वैसे पिता हैं जिनका परिवार ही सब कुछ है वह परिवार उनकी प्रेरणा है, परंतु स्थितियों के संघर्ष में, वह अपने परिवार से अलग हो जाते हैं या कर दिए जाते हैं। यह सब घटनाएं घुटन की सृजनात्मक अभिव्यक्ति है, जो नई कहानी में लगातार व्यक्ति को साहचर्य ही अकेला निराशा से भरा बना देती है। पिता मात्र धन उपार्जन के निमित्त मात्र बन गए हैं। परिवारिक समझ का पैदा ना होना ही सबसे बड़ा कारण ऐसा लगता है जैसे कोई पिता को समझना ही नहीं चाहता। नामवर सिंह कहते हैं 'आज की हिंदी कहानी के चरित्र हमारे जीवन की वास्तविकता के ऐतिहासिक विकास के प्रतीक हैं।'[6]

सन्दर्भ–सूची :–

1. सुरेंद्र चौधरी हिंदी कहानी पाठ और प्रक्रिया।
2. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास विश्वनाथ त्रिपाठी ओरिएण्टल ब्लैकस्वान, दिल्ली 2007 पृ.145।
3. नामवर सिंह कहानी नई कहानी लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली 2014 पृ 49।
4. डॉ साधना पारिवारिक यथार्थ का आराधना राग अरागात्मक चेहरा वापसी
5. कमलेश्वर नई कहानी की भूमिका राजकमल प्रकाशन , दिल्ली 1978 पृ .31।
6. नामवर सिंह कहानी नई कहानी लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली 2014 पृ 164।

A Study on Awareness of Corona Virus

(Among the people of Brahmpur, District – Buxar, Bihar)

Dr. Raghavendra Mishra*
Amit Kumar Singh**

Abstract : The Corona virus disease, popularly known as COVID-19, has emerged as a severe health pandemic which has spread across the globe. It has created havoc in countries including the bigwigs like the United States, Italy, China, among more than 200 nations. The global pandemic has haunted all most each and every part of the world, taking a heavy toll on the human life and world economy. India is also not left untouched by the mayhem of the deadly contiguous virus that spreads from human to human. In the past decade, India and the world has witnessed several health outbreaks ranging from H1N1 to Zika and Nipah which were successfully tackled by the government and the designated authorities. But Corona is something bigger as it has brought the global momentum to a standstill with every continent, country, state, district and the smallest of block keeping no stone unturned to check the spread of the invisible enemy. With its 1.3 billion populations, India is at constant risk of rapid spread of infection as the densely populated states with resource-constrained environments derail the speed of the fight against COVID-19. The virus positive persons are increasing day by day in the country. The current study aims to investigate the people of Brahmpur village in Buxar district of Bihar about their level of understanding of the disease and their awareness about the relief measures against it. The study will help to estimate the ground realities of the level of awareness that the people residing in Brahmpur village have and will further aid the local authorities to make necessary changes for the proper execution of lockdown with minimal impact to the mankind. The method of research adopted for the study is survey, in which people residing in Brahmpur village, during the lockdown period i.e. March 23, 2020 to April 26, 2020, have been interrogated with the help of interview/scheduled prepared for the study. The study will try to understand at micro level the degree of awareness among the people and their self-regulation to fight the virus.

Keywords: Lockdown, Corona Virus, Village, Pandemic, Crisis

Introduction : Corona or COVID-19 is the word that is haunting the world today. India too is not untouched by the havoc that it has played. It has led to serious health emergency, bringing the human life to an absolute pause. The Indian government has left no stone unturned to keep a check on the spread of the deadly virus. News is rife in the world media that the Corona virus has its roots in China as the first case of this infection was reported from China's Wuhan. According to World Health Organization (WHO), Corona virus disease is pneumonia of unknown cause detected in Wuhan and

* **Associate Professor, Department of Journalism and Mass Communication.**
* * **Research Scholar, Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak (MP)**

China first reported to the WHO Country office in China on 31st December 2019." However, China's role in the spread is still a matter of scrutiny and nothing firm can be said at this point of time.

As many as more than 200 countries, areas or territories are affected with this pandemic. The below mentioned table illustrates figures about the cases related to Corona. This data is increasing day by day and by the time of publication of this paper the virus may have affected lakhs of people in the country.

	Bihar	**India**	**World**
Total number of reported cases	243	26495	2 774 135
Total number of active cases	195	19868	
Total number of recoveries	46	5803	
Total number of deaths	2	824	190 871

Source: WHO and Ministry of Health Affairs (Government of India)

Figures are as on 26th **April 2020.**

The first case of COVID-19 was reported in the Indian state of Kerala on January 30th this year. A student studying in Wuhan University was first reported positive in India. Since then the government started taking all necessary measures to check the virus spread in the country. From thermal screening of passengers at the international and domestic airports to suspending flight services indefinitely, from stalling the Railways for the first time in the Indian history to putting a total lockdown, the Narendra Modi-led Central government took all possible steps to stop the virus spread entering third stage. The government first announced lockdown for a period of 21 days from March 23 to April 14, initiating with the infamous March 22 "Janata Curfew". The lockdown has been further extended till May 3rd by the Center, with some relaxations from April 20th in the non-hotspot zones. Some sources and experts are also saying that this Lockdown will continue till June 2020 because in these months the virus will affect most of the people.

The second phase of lockdown is ongoing during the study period. First time in the history of India people faced the complete lockdown. Only the persons of essential services can go for their work. From road to rail to waterways every passenger and some commercial services are suspended till the further order of the government. In most of the states like Delhi, Uttar Pradesh, Madhya Pradesh, Bihar, Maharashtra and others some areas have been traced as hotspots, which are completely locked, it means the person cannot come out of their house. The basic need will be supplied to them by the authority and the person assigned.

The government has announced Rs 1.70 lakh crore relief packages for the families that are below poverty line to aid them in tackling the financial difficulties arising from

Covid-19 outbreak. Some of the initiatives of the government which are directly going to help the people in villages at large are mentioned below.

- BPL families to get free cylinders for three months under Ujjawala scheme.
- A compensation of Rs 500 per month for the next three months for 20 crore Jan Dhan women account holders.
- One-time additional amount of Rs 1,000 in two installments to be given through DBT over a period of three months for 3 crore senior citizens, specially-able people and widows.
- An increase of Rs 202 per day in wages of MGNREGA workers.
- **Rs 2,000 installment in April** for 8.69 crore farmers under Kisan Samman Nidhi.
- Rs 50 lakh insurance cover for each health workers for three months.

About Corona Virus Disease

"The outbreak was declared a Public Health Emergency of International Concern on 30 January 2020."(https://www.who.int/emergencies/diseases/novel-Corona virus-2019/events-as-they-happen). Corona virus disease, also known as COVID-19, is a contagious respiratory illness which spreads from human to human. The possibility of animal to human infection of this virus is still under investigation. Elderly people and those suffering from medical difficulties like diabetes, chronic respiratory disease, cardiovascular disease and cancer are more vulnerable to this viral infection. But this should never be concluded as young people or children are safe from this virus. "On 11 February 2020, WHO announced a name for the new Corona virus disease: COVID-19."

"Corona viruses are a large family of viruses which may cause illness in animals or humans. In humans, several Corona viruses are known to cause respiratory infections ranging from the common cold to more severe diseases such as Middle East Respiratory Syndrome (MERS) and Severe Acute Respiratory Syndrome (SARS). The most recently discovered Corona virus causes Corona virus disease COVID-19" (https://www.mohfw.gov.in/).

The most common symptoms of COVID-19 are dry cough, sore throat, fever and tiredness. Symptoms of runny nose, diarrhea and nasal or chest congestion can also be found in some patients. As per the website of Indian Health Ministry, "one out of every six people who gets COVID-19 infection becomes seriously ill and develops difficulty breathing."

It completely depends upon one's immunity that how badly the virus has affected the person. There are cases where symptoms have not developed or are visible in an infected person. A reason of respite is that the Ministry of Health Affairs' website says that about 80 percent of the cases can recover without any special treatment. All that

matters are a good immune system and a disciplined approach to follow the precautionary measures properly.

Fortunately, India is still in Stage 2 where its spread has remained limited to some local areas and the transmission has not reached to community level. The government guidelines to prevent and decelerate transmission of COVID-19 virus says,

- Washing hands with soap or using an alcohol based hand sanitizer.
- Avoid frequent touching of face.
- Practicing respiratory etiquette at public places and at home, for example by coughing into a flexed elbow.
- Maintaining social distancing.
- Staying at home and avoiding unnecessary travel, even at local market.
- Following self-isolation when feeling unwell.

The onset of stage 3 of this contagious disease can be a disaster for country like India. The reason of worry is bigger because there is no designated vaccine or treatment for Corona virus so far. The world scientists and researchers are working rigorously day and night to develop a dedicated vaccine for COVID 19. But till that time the only way to check the spread and remain safe is by practicing “prevention is better than cure”.

Symptoms: Fever, weakness and dry cough are the most common COVID-19 symptoms. Aches and pains, inflammation of the nose, runny nose, sore throat or diarrhea may occur in some patients. These symptoms are usually mild, and start slowly. Some people get sick and may not feel unwell, but have no symptoms. Most people (approximately 80 per cent) recover without special treatment from the disease.

Virus spread: COVID-19 will be caught by those who have the virus. The disease is transmitted from person to person by tiny droplets from the nose or mouth that disperse when a person with COVID-19 coughs or exhales. Those droplets on objects and surfaces land around the person. Others then capture COVID-19 by touching and then rubbing their eyes , nose or mouth with certain objects or surfaces. People may also catch COVID-19 if droplets are breathed in by a person with COVID-19 who coughs out or exhales droplets. That is why it's important to stay more than 1 metre (3 feet) away from a sick person. Till now reports say the virus is not spreading through air which is good concern for the life.

Review of the Literature

- **Showkat, N., & Gull, M. (2020)** found Internet as effective platforms for various media outlets for risk and outbreak communication. By using paired sample t-test they have explored trend of google search related to the Covid-19 pandemic. They have selected 13 key terms and suggested to front warriors to use these key words to avoid misinformation and supply of unauthentic and wrong information and fake news.
- **Haddow, G. D., & Haddow, K. S. (2013)** have explained need of communication during disaster and accepted communication as key element in

success of disaster management. Authors found positive correlation between accurate information dissemination and reduction of risk, safety of life and property and fast recovery from the crisis. They also pointed out that firsthand informers have become important in the age of new media.

- **Lundgren, R. E., & McMakin, A. H. (2018)** have considered risk communication as important element of crisis management. Their work collects important inputs for communicating during crisis for professionals from diverse fields; from health workers to communication specialists and consultants.
- **Barbara Reynolds (2011)** have discussed basic elements of crisis and emergency risk communication and advised to understand the psychology of people during crisis before making any communication plan.
- **Azim, S. S., Roy, A., Aich, A., & Dey, D. (2020)** have suggested creation of official source of information, two-way mode of communication and extensive use of digital media applications to avoid misinformation and combat with fake news during Corona-19.
- **Ganguly, D., Misra, S., & Goli, S. (2020)** have analyzed four aspects related to Covid-19 i.e. social distancing, perceived risk, desired specific action and compliance policy in communication and found that understanding psychology of individual is crucial for desired action.
- **Singhal, T. (2020)** has mentioned ill effects of the economic, medical and public health infrastructure due to Corona crisis.
- In the opinion of **Singh, Rajesh and Adhikari, R. (2020)** three-week lockdown is insufficient and to prevent resurgence of the epidemic sustained lockdown with periodic relaxation is required.
- **Roy, D., Tripathy, S., and others (2020)** have revealed symptoms of anxiety, worries, paranoia and more than 80% people need mental healthcare support to face the situation.

Research Methodology

The methodology of the present study is descriptive research where researcher has recorded the phenomenon as it happened and on the basis of primary data trends of the study is established through analyzing relationship and behavior of variables in different situations. Researcher has prepared Interview/ scheduled and data was collected with the help of simple random sampling.

- **Universe:** The village Brahmpur of Buxar district of Bihar is taken as the universe of the study.
- **Sample:** After considering the heterogeneity of the area and the population, 54 samples were taken for the study looking towards the reach of the sample, lockdown and social distancing norms**.** Samples were taken from the population staying in Brahmpur village during the lockdown period from March 23 to April 26 this year (2020)

•

Profile of Respondents

➢ **Age** • 11-20 years:3.70% • 21-30 years:27.8% • 31-40 years:16.70% • 41-50 years:22.20% • 51-60 years:20.40% • More than 60 years: 9.3% ➢ **Gender** • Female: 44.4% • Male:55.60% ➢ **No. of family members** • More than 4 members: 66.70%	➢ **Family type** • Nuclear: 63% • Joint: 37% ➢ **Marital Status** • Unmarried: 25.90% • Married: 72.20% • Others: 1.90% ➢ **Occupation** • Farmer: 24.10% • Daily wage earner:16.7% • Self-employed: 13% • Government job:7.4% • Private sector job:11.10% • Home maker:9.3% • Retired:5.6% • Student:13%

Profile of study area : The name Brahmpur means the place of Brahma in Sanskrit. The village is famous for its God Shiv temple which is known as Brahameshwar Nath Mandir and the people from faraway places come to worship here. It is said that this is the only lord Shiv's temple whose entrance is from west otherwise every temple has entrance from the east. The nearest railway station is about 3 km and the road is connected with NH 84. Brahmpur village comes under the district Buxar, which is about 33 km from the district. There are two Sub Divisions and 11 Blocks in the district. 7 Blocks (Dumraon, Nawanagar, Brahmpur, Kesath, Chakki, Chougain, Simri) are in Dumraon sub- division and 4 Blocks (Buxar, Itarhi, Chousa, Rajpur) in Buxar Sub Division. There are 11 Blocks in the district where Brahmpur is one among them and there are 18 Panchayat s in the Brahmpur Block. The district has an area of 1624 sq km with 1142 villages and 142 Panchayat s. There are 1927 households with 13727 (7328 males & 6399 females) number of persons in the Brahmpur village.

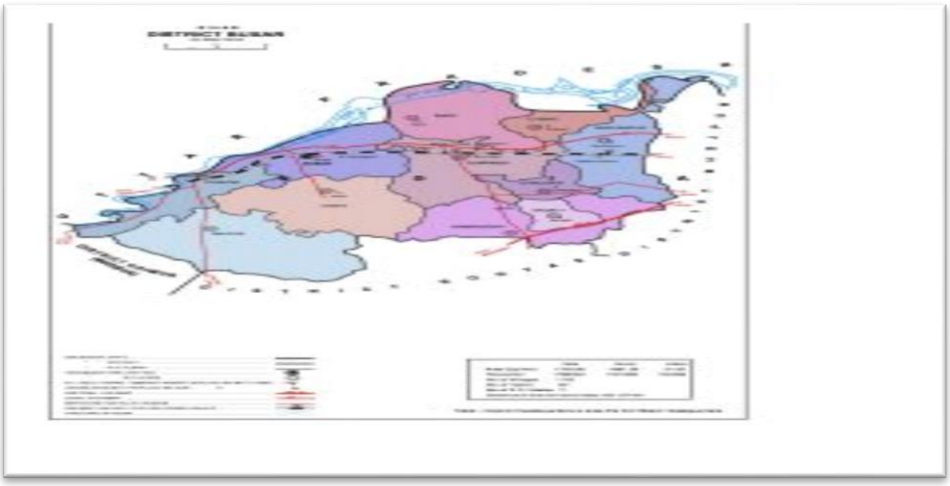

Figure 1. Map of the district with village Brahmpur

Corona cases in the district Buxar

The Corona cases in the districts have been increasing day by day as per the report from the district administration sources. The history of cases had been found from the person who was found to be attended Tablighi Jamaat congregation (as per news sources). Till now Buxar is in top five districts of increasing number in cases after Munger, Nalanda, Patna, Siwan districts. Figure below provided by the district administration till 26th April, there are 25 positive cases in the districts. Till then 207 samples are awaiting. Looking towards the data first 2 cases were found than 8 and then 10 then 20 it became 25 on 26th of April 2020 and still the cases are increasing.

Findings and Interpretation

With the help of scheduled, the researcher interrogated 54 people of Brahmpur who were present in the village during the lockdown period between March 23, 2020 and April 26, 2020. The questions were framed in such a manner so that one can understand how much people are aware about the disease and how far they are following the government's instructions. Researcher had tried to interpret the findings of the survey with the help of pie chart and bar graph.In order to find out how many people are aware about the Corona virus researcher asked them about the same and found out that 93 percent of the total respondents opted to 'yes' to the question. Out of the total 54 participants, 47 recorded their answer for the question. (Fig 2)

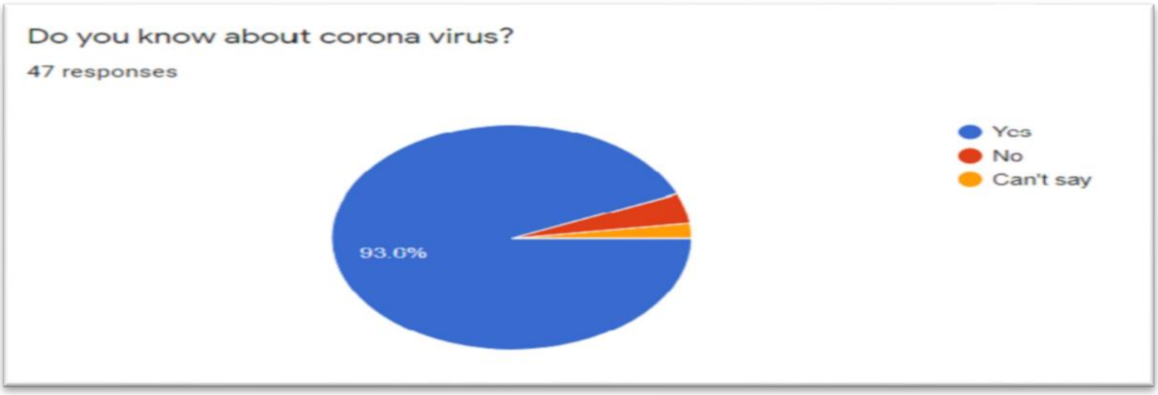

Figure 2

The study showed that 6.40 percent of the respondents were either not aware or had some confusion about the virus (Fig 2). This poses serious health risk to these people in articular and the people of Brahmpur in general. Television served as the biggest medium of communication in this time as 70.40 percent of total 54 participants learnt about the Corona virus through it. It was followed by relative and neighbors with 64.8 percent each. Radio was found to be the least popular medium among the participants. (Fig 3)

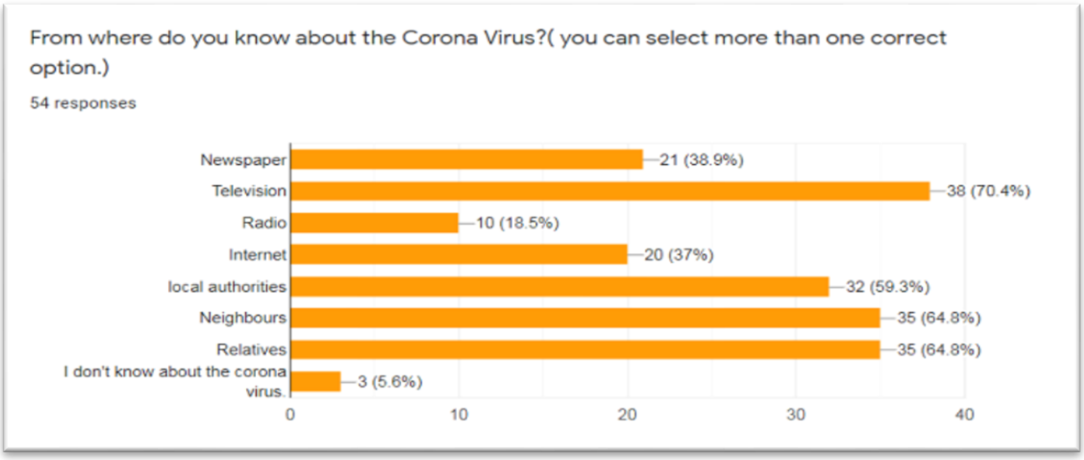

Figure 3

The Panchayat and local authorities that also include police administration played important role in creating awareness among the people of Brahmpur. The study found that majority of the study participants got information about the deadly virus through

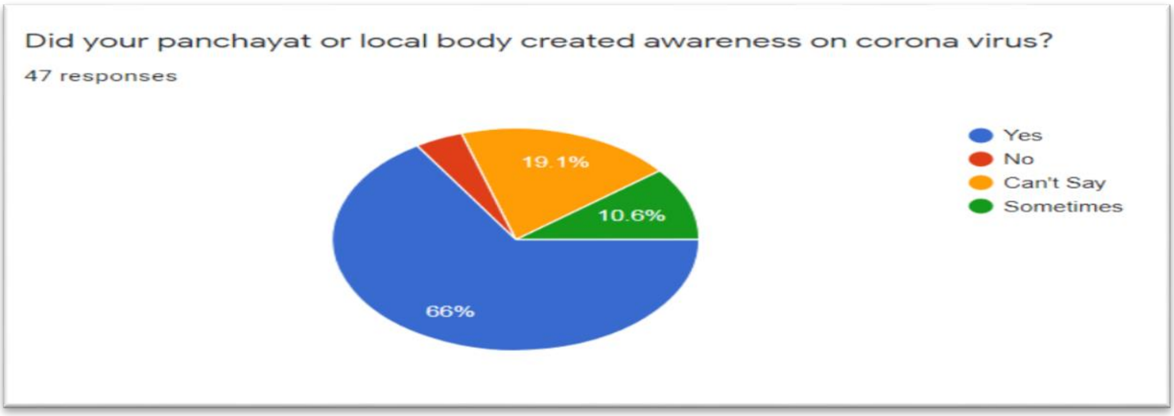

several **Figure 4**

measured adopted by the local administration. 66 percent of the total respondents said that Panchayat or the local body created awareness on Corona virus among the people of Brahmpur (Fig 4).

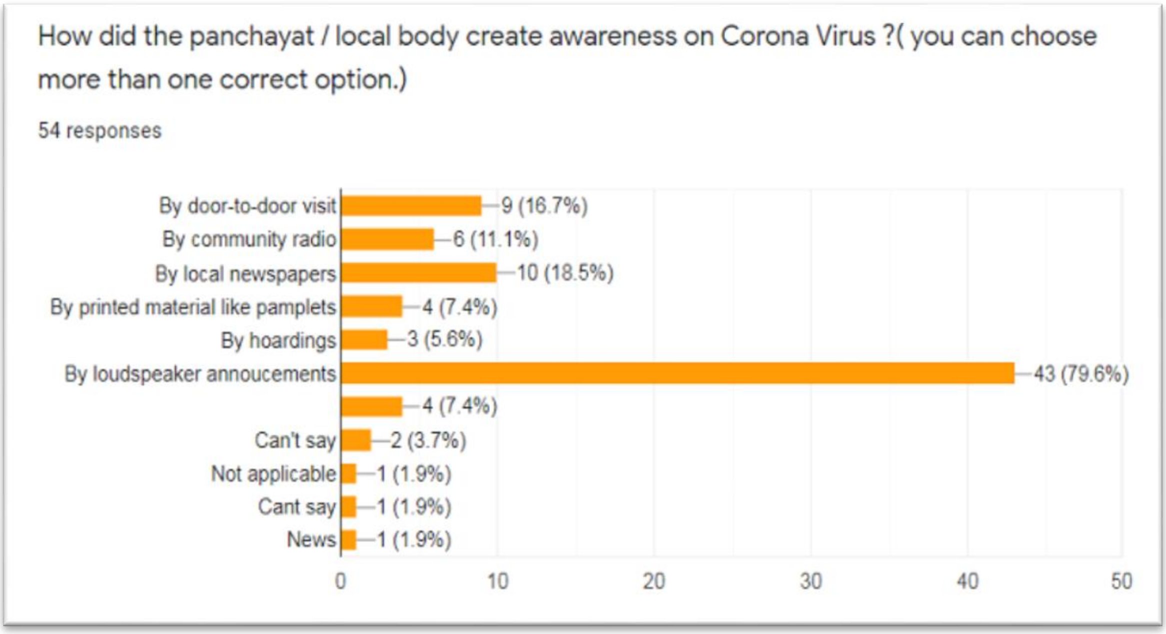

Figure 5

The popular method adopted for creating awareness among the people was with the help of loudspeaker announcements (Fig 5).

The government has taken several initiatives to handle Corona virus spread. Among all the initiatives, lockdown was the toughest one that has directly affected each and every pocket of the society. The worst-hit by the lockdown were farmers, migrant workers, daily wage earners, local businesses and people living below poverty line. During the research, researcher tried to find out sentiments of the people about the lockdown. The study found that 64.80 percent of the total 54 respondents supported the lockdown decision of the government. (Fig 6)

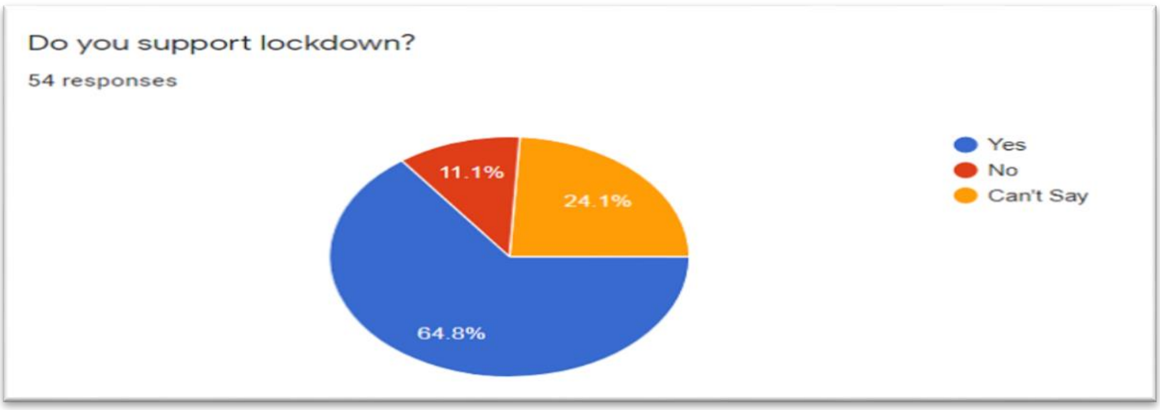

Figure 6

Of the total 54 people interviewed during study, 35.2 percent either said no to government's decision of calling lockdown or refused to comment on the question. (Fig 6)

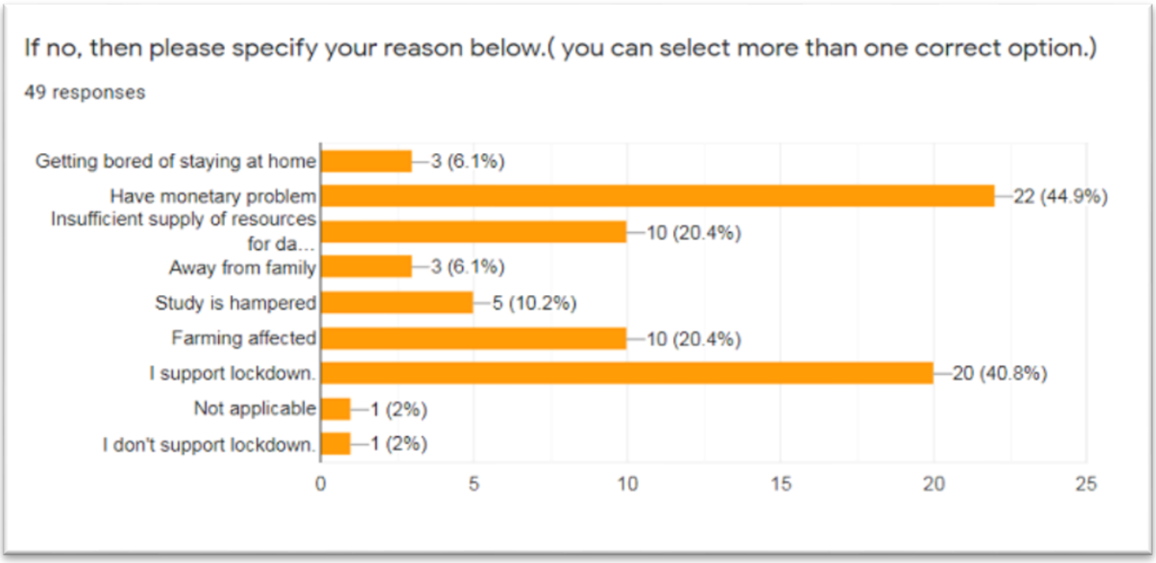

Figure 7

Among the most evitable reasons for people saying no to lockdown was the financial difficulty that they were facing due to lockdown. 44.9 percent of the total 49 respondents opted for monetary problems followed by 'insufficient supply of resources' and 'farming affected' as the reasons with 20.40 percent vote share recorded in both the categories each. (Fig 7)

The study further tried to find out how the people of Brahmpur behaved while they come out of their homes during relaxation hours in the lockdown phase. The survey found that 33.3 percent people said that they come out of their homes daily. While 12.8 percent people preferred coming out in two days, a good percentage of people (22.2 percent) came outside their homes in three or more days, 14.8 percent were among those who completely stayed at their homes during the lockdown period and never stepped outside due to any reason. (Fig 8)

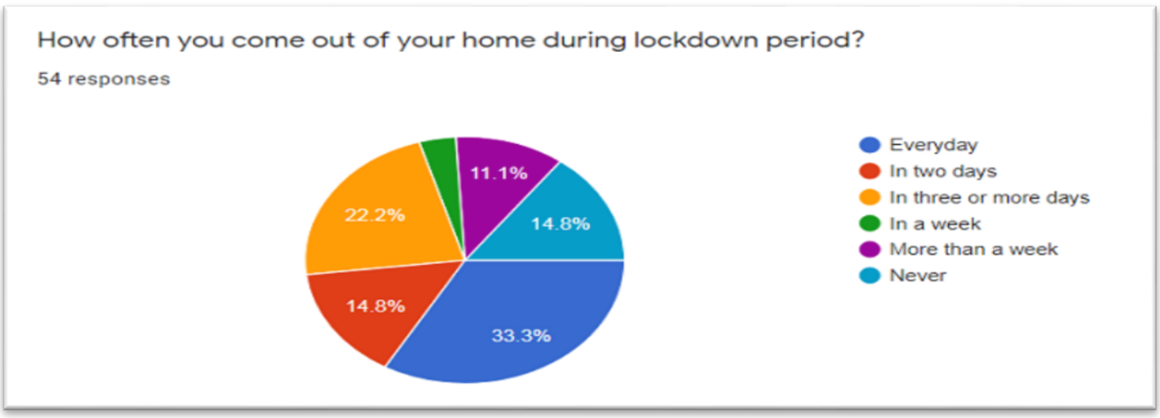

Figure 8

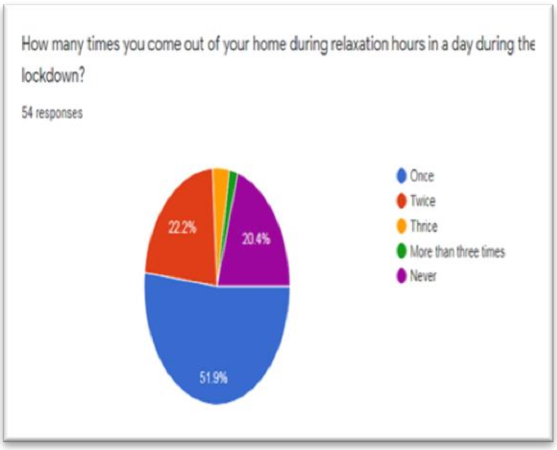

Figure 9

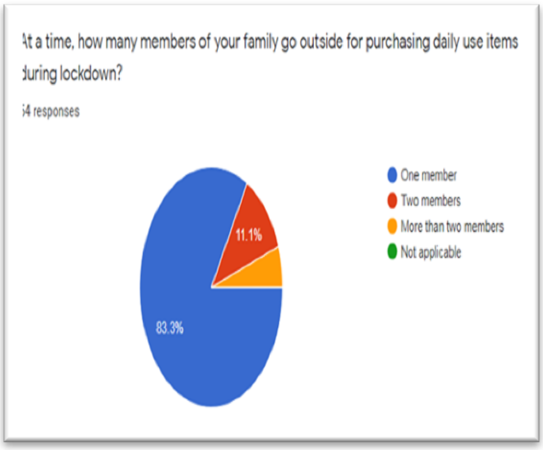

Figure 10

Of the total participants, 51.9 percent came out of their homes one time only in a day during the relaxation hours. 80.3 percent came outside their homes alone. (Fig 9, 10) This shows that majority of people were aware of the consequences of not staying at home and coming in groups outside their home. The results also showed that majority of the population were following the government's directives related to the lockdown and relaxation hours.

The illustrations in figure 11 shows that majority of people in Brahmpur have understood the importance of social distancing as a whopping 88.9 percent were found practicing the same when they stepped outside their homes. 61.10 percent of the total 54 respondents said that they wear masks or covered their face whenever they go outside for any reason. (Fig 12)

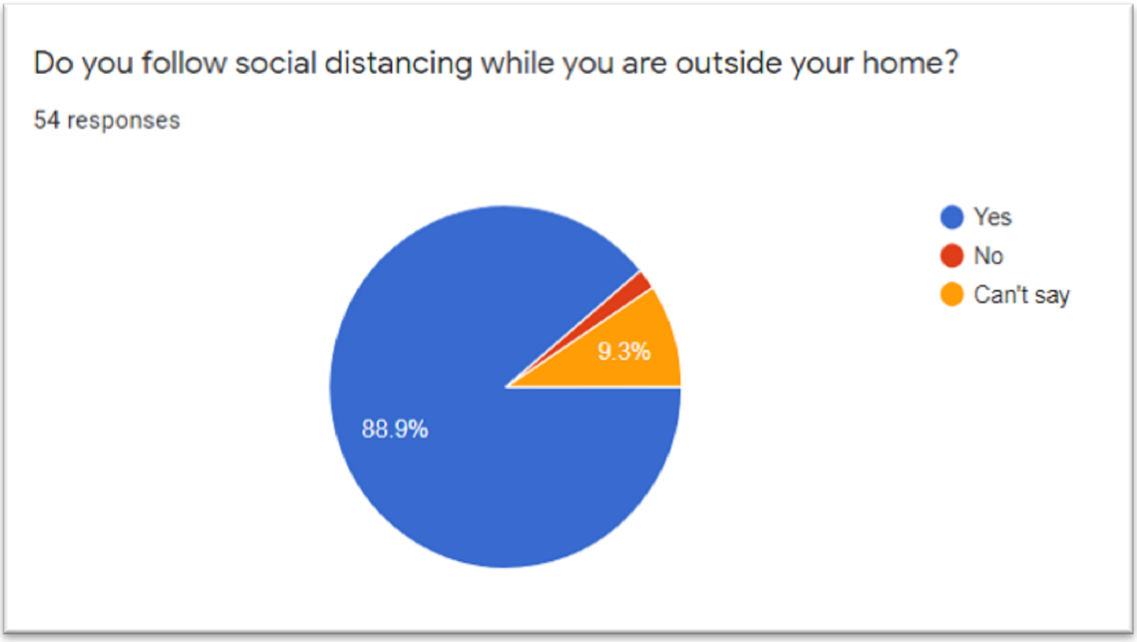

Figure 11

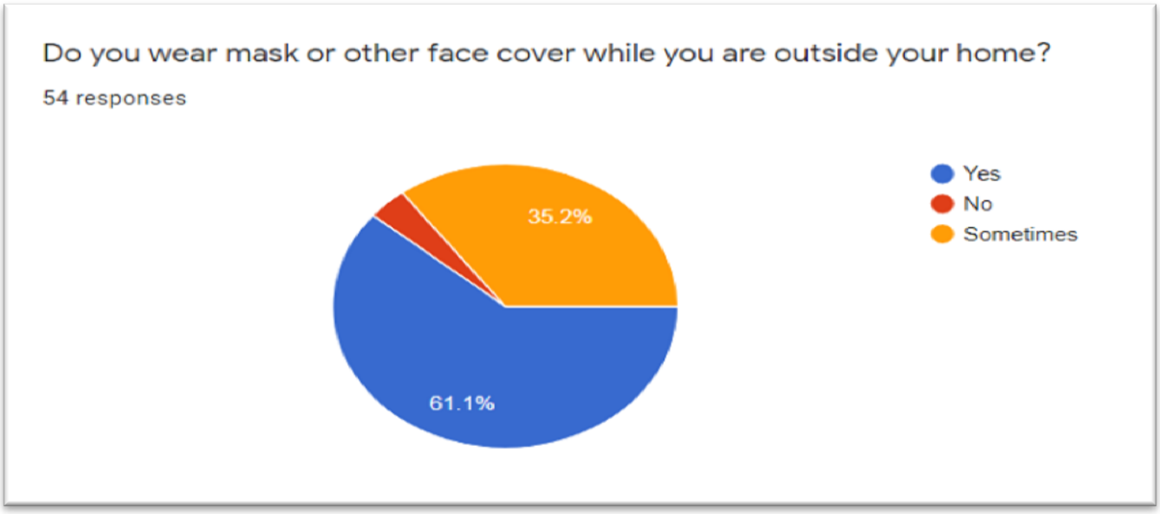

Figure 12

On the other hand, 35.20 percent people were found to be wearing masks or covering faces occasionally. There were just 3.7 percent who had never worn masks or covered their face when moving outside. (Fig 12)

In the study, the researcher also tried to find out that whether the participants visited to the essential/emergency services like hospitals and banks. In order to study their pattern, researcher asked them whether they have visited hospitals and banks and if yes then how often. The reason to put these questions before the participants was to understand the people's attitude towards availing these essential services. The researcher also wanted to know whether these essential service providers were overburdened with irrelevant crowd which could derail the efforts of the government on fighting Corona virus.

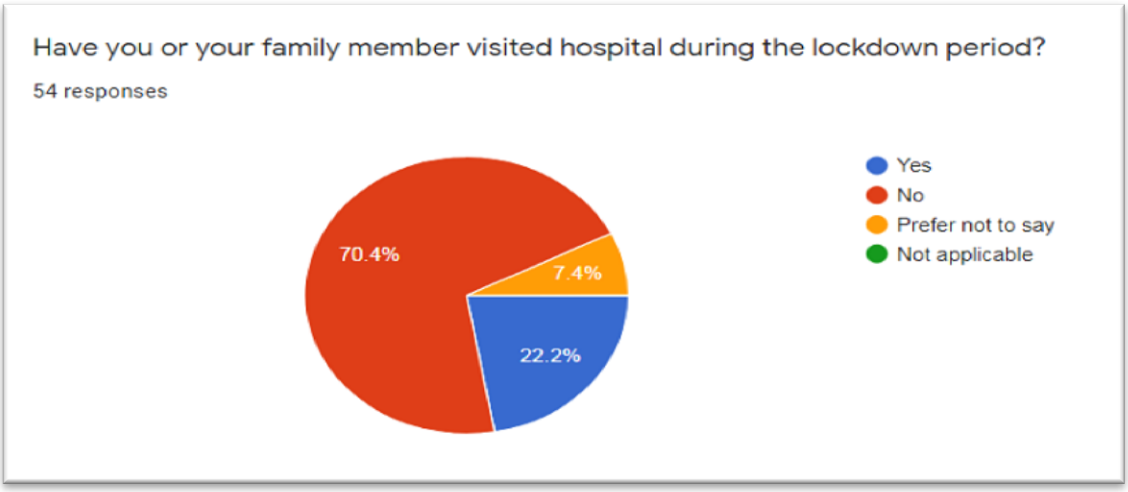

Figure 13

An outstanding percentage of people (70.40 percent) said no about their visit to hospitals (Fig 13). This emerged as good news from the perspective of health issues,

especially in the time of Corona epidemic. Just 22.20 percent people visited hospitals. 7.40 percent people preferred not to respond to the question.

As far as banks are concerned, a whopping 31.50 percent people chose not going to banks in the lockdown period. While just 3.70 percent respondents went daily for banking purposes, 20.4 percent visited banks once in a week. The study found that 22.20 percent of the total 54 respondents preferred visiting branches in more than a week. The findings are illustrated in the figure 14.

The government has announced several relief measures to fight the financial woes of the common man arising due to the national lockdown. All the financial relief measures are routed through banking channels. Hence, researcher tried to find how much these

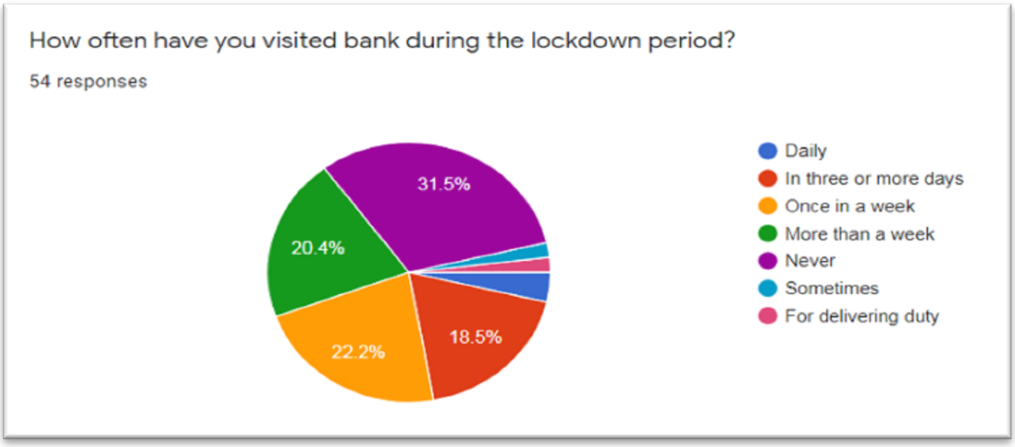

measures contributed to people coming out of their homes.

Figure 14

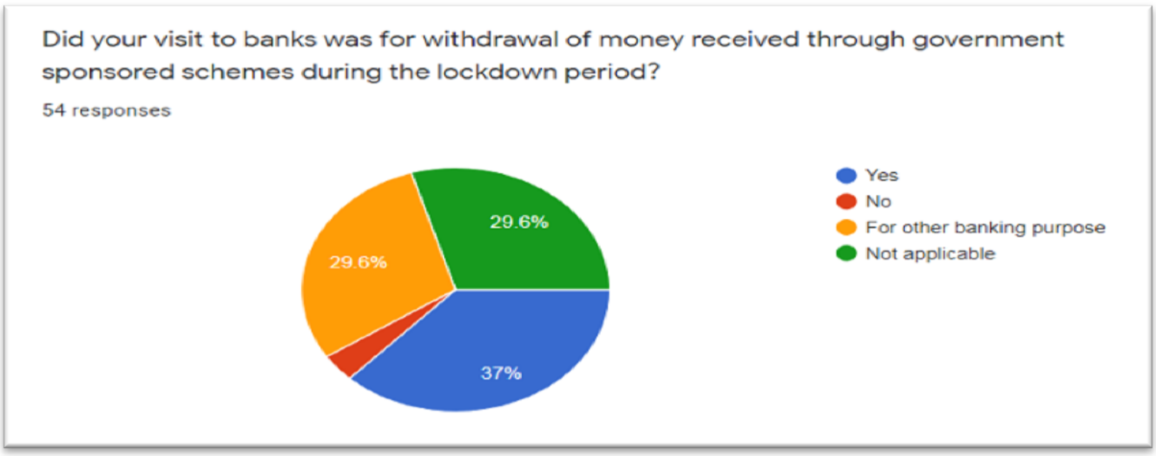

Figure 15

The majority of people, i.e. 37 percent of the total respondents came out of their homes to withdraw money from their accounts that they have received under direct

benefit transfer through government sponsored schemes. 29.60 percent of the participants said that they visited braches for availing other banking services. (Fig 15).

The government is using all the means to fight Corona. The love for Digital India has established the Modi government as the digital masters. Taking technology way, the government has launched Aarogya Setu app to keep a check on Corona Virus spread. Besides alerting the people about any Corona positive person, the app also provides latest updates on the Corona related news. In order to find out the popularity of the app at the micro level, the researcher asked the participants about Aarogya Setu app and whether they use it. Only 45 participants responded to the first question on whether they know about the app. 60 percent said yes to the question while 28.9 percent were found to be unaware about the app. (fig 16)

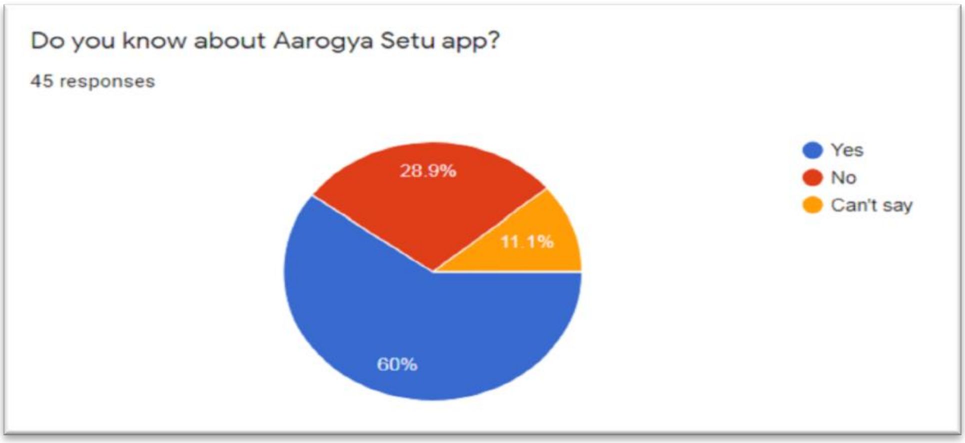

Figure 16

On asking whether they used the app, 47 chose to reply to the question out of 54 participants of the study. 59.60 percent of the respondents said that they don't use the app. Unavailability of mobile phones, internet problem, poverty and illiteracy may be the probable reasons for the outcome. The picture though was not gloomy as a good percentage (40.40 percent) of the respondents was found to be using the app (Fig 17). This is good news from the perspective of the composition of Brahmpur village with regards to its population.

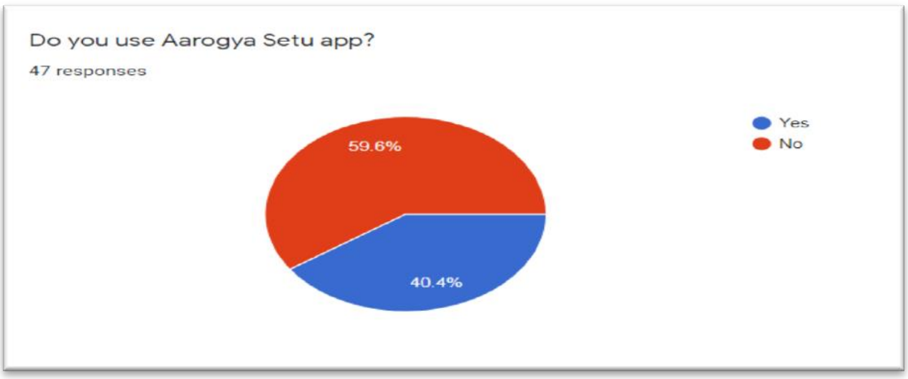

Figure 17

Conclusion and Recommendations

The study has found that majority of people are aware of the health threat that Corona has posed to India in particular and the world in general. Both government and the general public (with administrative regulation) is working together to fight the menace. On the scale of five, 48.10 percent people gave four (4) to the efforts of the local authorities of Brahmpur in fighting Corona menace (fig 18).

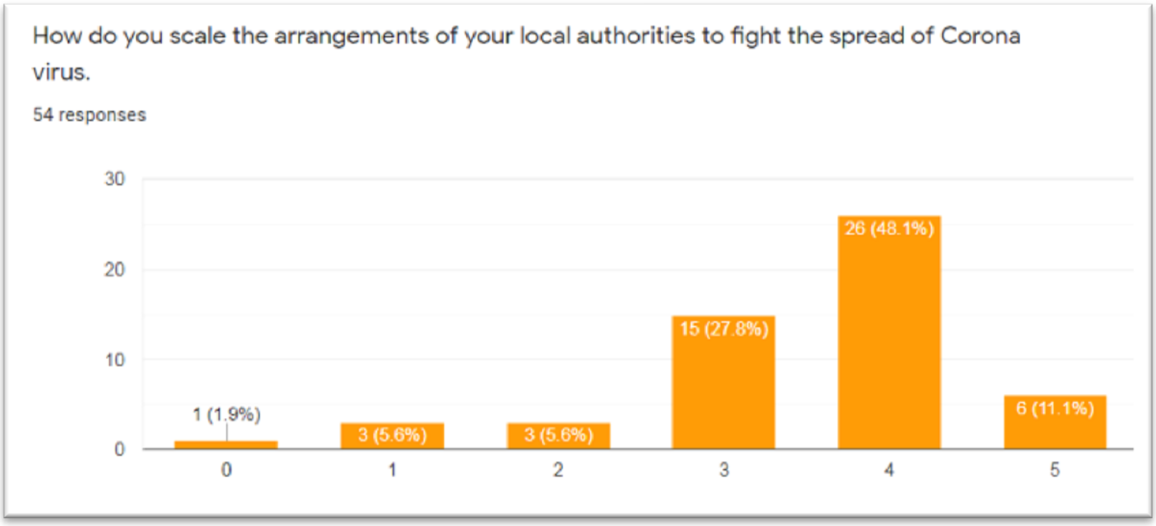

Figure 18

The study participants also gave several suggestions to the government as well as the fellow residents. Some of the suggestions are mentioned below.

- Authorities should be more vigilant against those who are visiting banks again and again for non-essential reasons.
- Stop spread of fake news for people stuck in Brahmpur.
- Everyone should keep soap and water outside the homes for passer-by to help them maintain hand hygiene.
- Rapid tests for Corona should be in place.
- People are facing trouble at banks due to long queues. Authorities should be vigil in ensuring social distancing is not compromised.
- Stricter actions should be taken against the lockdown violators.

Conclusion

Village is totally dependent on agricultural activities. The nature of agriculture is primitive and no supportive industry or other sector is developed which can feed the population. Either the people here work under MANREGA or they work for the agricultural activities. Shops and other activities are there in the village which is run by the local people and the nearby village people. The local administration had given proper guidelines for regulation of market activities in the village during the lockdown. There is no such movement in the market during the lockdown rather than going for

essential services. Those roaming without any reason are beaten by the police and proper action is also taken against them if found breaking the lockdown.

During the research the researcher has seen various activities in the village. Those dependent on agriculture are working in their fields. April is the season of harvesting Rabi crop. People are also facing problem of human resources because most of the people are stuck in other states. Those are gone for working in states like Delhi, Mumbai and Gujarat etc. these people came back during harvesting & cultivation season in the village and they again go back to work in other states(some are seasonal migrants).

They also thanked to the government that they got their money which is promised by the center to provide 500 and other such benefits for three months. But here one problem has been seen, the poor people have to go to bank to know that their money has been credited in their account or not. As seen by the researcher in the bank many village women are waiting near the bank to get their 500 or to know the amount has been credited or not.

The villagers are facing many problems during the lockdown. Their earning activities has been stopped and there is chaos among them that what we will do. There is lack of awareness in the village. Local administration had not provided much information so that villagers can understand about the pandemic in a broader way. There are no hoardings and other such things to make the people aware. In spite life is running smoothly in the village if compared to slums of the urban areas. The Corona cases in the districts have been increasing day by day as per the report from the district administration sources. The history of cases had been found from the person who was found to be attended Tablighi Jamaat congregation. Till now Buxar is in top five districts of increasing number in cases after Munger, Nalanda, Patna, Siwan districts Bihar.

References :-

1. https://www.mohfw.gov.in/dashboard/index.php
2. Official website of World Health Organisation (WHO)
3. 2011Census of India website ttps://web.archive.org/web/20130513094411/http://censusindia.gov.in/PopulationFinder/View_Village_Population.aspx?pcaid=979637&category=VILLAGE
4. https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=197738
5. https://pib.gov.in/PressReleseDetail.aspx?PRID=1608345
6. https://cdn.s3waas.gov.in/s34f4adcbf8c6f66dcfc8a3282ac2bf10a/uploads/2018/03/2018032028-232x300.jpg
7. https://www.mohfw.gov.in/
8. https://economictimes.indiatimes.com/news/politics-and-nation/govts-plan-to-contain-local-outbreak-is-yielding-results-lav-agarwal/articleshow/75159535.cms?from=mdr
9. https://www.financialexpress.com/lifestyle/health/coronavirus-in-bihar-28-test-positive-for-covid-19-state-tally-reaches-251/1939852/
10. https://www.mohfw.gov.in/

11. https://www.who.int/emergencies/diseases/novel-coronavirus-2019
12. Press Information Bureau, Press release detail, PRID=197738
13. Press Information Bureau, Press release detail, PRID=1608345
14. Overview of Corona Virus https://www.who.int/news-room/q-a-detail/q-a-coronaviruses
15. Detail Question and Answers on COVID-19 for Public https://www.mohfw.gov.in/
16. https://www.who.int/emergencies/diseases/novel-coronavirus-2019/events-as-they-happen
17. www.censusindia.gov.in
18. Tai, Z., & Sun, T. (2007). Media dependencies in a changing media environment: The case of the 2003 SARS epidemic in China. New Media & Society, 9(6), 987-1009.
19. Funk, S., Gilad, E., Watkins, C., & Jansen, V. A. (2009). The spread of awareness and its impact on epidemic outbreaks. Proceedings of the National Academy of Sciences, 106(16), 6872-6877.
20. Ringel, J. S., Trentacost, E., & Lurie, N. (2009). How Well Did Health Departments Communicate About Risk At The Start Of The Swine Flu Epidemic In 2009? In a critical time frame for worried information seekers, state and local health departments' responses varied greatly. Health Affairs, 28(Suppl1), w743-w750.
21. https://www.indiatoday.in/india/story/coronavirus-in-india-tracking-country-s-first-50-covid-19-cases-what-numbers-tell-1654468-2020-03-12 retrieved on 06/04/2020 at 11.24 am.
22. https://www.mygov.in/covid-19/ retrieved on 06/04/2020 at 11.49 am.
23. https://www.ecdc.europa.eu/en/health-communication/outbreak-communication retrieved on 06/04/2020 at 12.50 pm.
24. Showkat, N., & Gull, M. (2020). The Study of Google Search Trends for an Effective Communication during COVID-19 Pandemic. Cited from https://scholar.google.com/scholar?hl=en&as_sdt=0%2C5&q=ANALYSIS+OF+CRISIS+AND+EMERGENCY+RISK+COMMUNICATION+OF+COVID-19+BY+STATES+AND+CENTRAL+GOVERNMENT+IN+INDIA&btnG=
25. Haddow, G. D., & Haddow, K. S. (2013). Disaster communications in a changing media world. Butterworth-Heinemann.
26. Lundgren, R. E., & McMakin, A. H. (2018). Risk communication: A handbook for communicating environmental, safety, and health risks. John Wiley & Sons.
27. Barbara Reynolds (2011). Crisis and Emergency Risk Communication. CI Publications.
28. Azim, S. S., Roy, A., Aich, A., & Dey, D. (2020). Fake news in the time of environmental disaster: Preparing framework for COVID-19.
29. Ganguly, D., Misra, S., & Goli, S. (2020). India’s COVID-19 Episode: Resilience, Response, Impact and Lessons.
30. Singhal, T. (2020). A review of coronavirus disease-2019 (COVID-19). The Indian Journal of Pediatrics, 1-6.
31. Singh, R., & Adhikari, R. (2020). Age-structured impact of social distancing on the COVID-19 epidemic in India. arXiv preprint arXiv:2003.12055. obtained from google scholar.

ꕤ★ꕤ

(महात्मा गाँधी : 2 अक्टूबर 1869 – 30 जनवरी 1948)

महात्मा गाँधी के 150वीं जयंती के अवसर पर श्रृद्धांजलि के रूप में प्रस्तुत है
पं. सोहनलाल द्विवेद्वी की यह कविता...

तुम्हें नमन

चल पड़े जिधर दो डग, मग में
चल पड़े कोटि पग उसी ओर;
गड़ गई जिधर भी एक दृष्टि
गड़ गए कोटि दृग उसी ओर,
जिसके शिर पर निज हाथ धरा
उसके शिर-रक्षक कोटि हाथ
जिस पर निज मस्तक झुका दिया
झुक गए उसी पर कोटि माथ;
हे कोटि चरण, हे कोटि बाहु
हे कोटि रूप, हे कोटि नाम !
तुम एक मूर्ति, प्रतिमूर्ति कोटि
हे कोटि मूर्ति, तुमको प्रणाम !
युग बढ़ा तुम्हारी हँसी देख
युग हटा तुम्हारी भृकुटि देख,
तुम अचल मेखला बन भू की
खीचते काल पर अमिट रेख;
तुम बोल उठे युग बोल उठा
तुम मौन रहे, जग मौन बना,
कुछ कर्म तुम्हारे संचित कर
युगकर्म जगा, युगधर्म तना;
युग-परिवर्तक, युग-संस्थापक
युग संचालक, हे युगाधार !
युग-निर्माता, युग-मूर्ति तुम्हें
युग युग तक युग का नमस्कार !
दृढ़ चरण, सुदृढ़ करसंपुट से
तुम काल-चक्र की चाल रोक,
नित महाकाल की छाती पर
लिखते करुणा के पुण्य श्लोक !
हे युग-द्रष्टा, हे युग सृष्टा,
पढ़ते कैसा यह मोक्ष मन्त्र ?
इस राजतंत्र के खण्डहर में
उगता अभिनव भारत स्वतन्त्र !

– पं. सोहन लाल द्विवेदी

संपादकीय / प्रकाशकीय पता :–
आलोचन दृष्टि प्रकाशन
आजाद नगर, बिन्दकी, जनपद–फतेहपुर, उ0प्र0–212635
ई–मेल : aalochan.p@gmail.com
दूरभाष : 09580560498 / 09451949951 / 7376267327